गुवा गोलीकांड के शहीदों की याद में

वार्षिक स्मारिका

2011

बलिदान

संपादक : बहादुर उराँव

झारखंड शहीद स्मृति मंच

मूल्य : 10 रु0

संपादकीय

अमर शहीदों और अन्य झारखण्ड आंदोलनकारियों को सम्मान दो

झारखण्ड राज्य निर्माण के 11 वर्ष पूरे होने वाले हैं। झारखण्ड राज्य के निर्माण तथा जंगलों एवं अन्य संसाधनों पर झारखंडी जनता के अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए कितने सारे लोग शहीद हो गये। अन्य कितने सारे आंदोलनकारियों ने जेल की सजा काटी और कष्ट भोगे। झारखण्ड की स्वायत्तता और जनता के अधिकारों के लिये लड़ने वाले सैकड़ों लोगों को अपराधिक मामलों में फंसाकर जेल में डाल दिया गया था और आज भी उनमें से कई मुकदमों में कोर्ट का चक्कर काट रहे हैं। शहीदों और अन्य आंदोलनकारियों के परिवार मुश्किल से गुजर बसर कर रहे हैं या पलायन कर रहे हैं।

अत्यंत दुख की बात है कि उन्हीं शहीदों और आंदोलनकारियों की कुरबानियों से हासिल राज्य की सत्ता पर बैटे लोग उनको और उनकी कुरबानियों को भूल गये हैं। इसके विपरीत, जिन जंगलों पर झारखंडी जनता के अधिकारों के लिए शहीदों ने कुरबानी दी उन जंगलों को खतम करने की छूट खनिजों को लूटने वालों को दी जा रही है। मंत्री और वनविभाग के उच्चाधिकारी मिलकर ठेकेदारों को अवैध रूप से जंगल काटने देते हैं।

लगातार सत्ताधारियों से माँग की जाती रही है कि शहीदों को सम्मान दो, उनके आश्रितों को नौकरी और अन्य सहारा दो; अन्य आंदोलनकारियों पर मुकदमें वापस लो और उनको सम्मान देते हुए नौकरी और आर्थिक सहायता दो। मैने मार्च 2006 में और मार्च 2011 में इस माँग पर अनशन किया। कितनी बार इन माँगों के लिए धरना, प्रदर्शन, रोड़जाम आदि किये। वादे मिले, कार्रवाई नहीं हुई।

मार्च 2011 में इन माँगों और अन्य माँगों पर विचार करने और माँगे पूरी करने के आश्वासन पर मुझसे अनशन तुड़वाया गया। 25 मार्च को सरकार से वार्ता भी हुई। वार्ता में उपमुख्यमंत्री सुदेश महतो, विधान सभा के अध्यक्ष सीपीसिंह, विधायक विनोद सिंह, अरूप चटर्जी और कमल किशोर भगत शामिल थे। सुदेश महतो ने कहा कि "यह बिलकुल जायज मांग है, सरकार संज्ञान ले चुकी है और इसे पूरा किया जायेगा।" वार्ता हुए करीब 6 महीने पूरे होने जा रहे हैं। आजतक माँगें पूरी नहीं हुईं।

सुदेश महतो ने आजसू पार्टी के बोकारो अधिवेशन में शहीदों को सम्मान देने की बात की। शिबू सोरेन ने भी शहीदों-आंदोलनकारियों को सम्मान देने के लिए बयान दिया। क्या कारण है कि सरकार इतने महत्वपूर्ण व्यक्तियों के वादों की उपेक्षा कर रही है।

शहीदों को याद करके मेरी आत्मा तड़पती रहती है। उनका खून मेरे सपनों में आता है। निश्चय ही झारखण्डी जनता को शहीदों और दूसरे आंदोलनकारियों की कुरबानियाँ याद हैं। उनको उचित सम्मान अगर हम नहीं दे पाते हैं तो अधूरे झारखण्ड आंदोलन को पूरा करने और अपने संसाधनों पर कब्जा करने की लड़ाई लड़ने का मनोबल हम कैसे जुटा पायेंगे?

अमर शहीदों को जोहार!

बहादुर उराँव

वन संसाधनों पर कब्जा वापस पाने का 150 वर्षो का संघर्ष और इस संघर्ष के शहीदों को सम्मान न देने का सुलगता प्रश्न

- सीताराम शास्त्री

1865 में एक कानून बनाकर अंग्रेजों ने जंगलों पर झारखंडी जनता से दखल और अधिकारों को छीन लिया। लेकिन आज तक झारखंडी जनता ने इसे कभी स्वीकार नहीं किया। वे हमेशा की तरह जंगलों का सामूहिक रूप से इस्तेमाल करने की कोशिश करते रहे और अपनी दखल और अधिकारों को वापस पाने के लिए लड़ते आ रहे हैं - कभी हथियारों से, तो कभी कानूनन, कभी शांति पूर्ण जनांदोलन द्वारा और कभी तो सिर्फ कानून की अवज्ञा करके। महात्मा गाँधी ने घोषित रूप से अवज्ञा आंदोलन द्वारा अंग्रेजों के कानूनों को नहीं मानने के लिए देश की जनता का आह्वान किया था, लेकिन झारखंडी जनता ऐसी कोई घोषणा किये बिना वन कानूनों की अवज्ञा लगातार करती रही क्योंकि आदिवासी यही मानते रहे हैं कि जंगल ऐतिहासिक रूप से उनके रहे हैं और उनपर उनका कब्जा और अधिकार रहा है और वे इस अधिकार को कभी नहीं छोड़ेंगे। यही है झारखंड में जंगल की लड़ाई।

भारत के आजाद होने के बाद आदिवासियों ने सोचा था कि अंग्रेजों द्वारा उनके साथ किया गया अन्याय दूर हो जायेगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। आजाद भारत की सरकारें उस अन्याय को जारी रखी रहीं। नतीजतन आदिवासी अपनी अवज्ञा भी जारी रखे रहे और सरकार उनका दमन-उत्पीड़न करती रही। सरकार तो देश की आम जनता के हित के नाम से जंगलों पर दखल कायम रखी रही, लेकिन वास्तव में देश के पूँजीपति वर्ग को लगभग मुफ्त में जंगलों को लूटने की छूट दी गयी और इस प्रक्रिया में वन विभाग को दलाल की भूमिका में रखा गया।

जिस तरह 1989 तक भारत सरकार ने अलग झारखंड राज्य के औचित्य को स्वीकार नहीं करने के बाद, आंदोलन का दबाव बढ़ने पर अलग झारखंड राज्य के औचित्य को स्वीकार कर लिया, उसी तरह वन अधिकारों के आंदोलन के दबाव में सरकार ने वर्ष 2006 में वन अधिकार कानून बनाया। कानून का उद्देश्य बताते हुए सरकार ने पहली बार इतिहास में यह स्वीकार किया कि आदिवासियों और अन्य वन निवासियों के साथ ऐतिहासिक रूप से अन्याय किया गया है और कहा कि इस ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने के लिए यह कानून बनाया जा रहा है, हालाँकि अन्याय बरकरार है और सिर्फ नगण्य मात्रा में कुछ जमीनें आदिवासियों को दी गयी हैं।

पिछले 150 वर्षों में जंगलों पर अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत आदिवासियों पर अकथनीय जुल्म ढाये जाते रहे हैं। बिरसा आंदोलन भी इसी संघर्ष का एक हिस्सा रहा है। सरकार के वन कानून की अवज्ञा करते हुए जंगल का इस्तेमाल करनेवाले लाखों आदिवासियों पर सच्चे-झूठे मुकदमें लगाकर अत्याचार किये गये, जेलों में बंद रखा गया। ऐसे वन अधिकार कानून बनाने के बाद जेलों में वैसे बंद कई लोगों को छोड़ देने के लिए सरकार ने आदेश जारी किया किंतु आदेश का कार्यान्वयन आधा-अधूरा ही किया गया है।

वनों को आरक्षित घोषित करने के बाद लाखों आदिवासियों को जंगलों से उजाड़ा गया जिनमें से कोई 20 लाख आदिवासी उत्तर बंगाल और आसाम के चाय बागानों में तथा अन्यत्र ले जाये गये। उनको अपने गाँवों, समाज, संस्कृति और आजीविका से जबरन विस्थापित किया गया। उन विस्थापितों को अभी तक न्याय नहीं दिया गया।

सिंहभूम का जंगल आंदोलन

1978 में जंगल आंदोलन में एक बड़ा उफान आया। सिंहभूम जिले में सारंडा-पोड़ाहाट जंगलों में एक बड़ा संघर्ष छिडा। पहले आदिवासियों ने साल के जंगलों को काटकर सागवान के जंगल लगाने का विरोध किया और सागवान के पौधों को उखाड़कर सीधी कार्रवाई की। इस कार्रवाई की प्रतिक्रिया में सरकार ने गोलियाँ चलवायी जिसमें ईचाहातू में एक और सेरेंगदा में तीन लोग मारे गये और सैकड़ों लोग जेलों में बंद किये गये। लेकिन दमन की इस प्रक्रिया से लोगों का गुस्सा और आंदोलन और भी तेज हुआ और आंदोलन ने बुनयादी रूप से एक नया रूप धारण किया।

मोरा मुंडा और अन्य कई अगुवों के नेतष्त्व में सारंडा और पोडाहाट क्षेत्र के आदिवासियों ने आवाज बुलंद की कि इन जंगलों में उनके गाँव रहे हैं, उनके गाँवों के निशान के रूप में खेती के लिए समतल की गयी भूमियाँ और संसानदिरियाँ (कब्रगाह) आज भी मौजूद हैं। और फिर वे अपने उन गाँवों की जमीनों को दखल करने लगे, और जंगल काटकर खेती करने लगे।

इसकी प्रतिक्रिया में वन विभाग और पुलिस लोगों पर व्यापक रूप से अकथनीय जुल्म ढाने लगी। हजारों लोग जेलों में बंद किये गये। सैकड़ों गाँव जलाये गये। दर्जनों लोग गोलीकांडों में मारे गये। अन्य कई प्रकार से लोगों को उत्पीड़ित किया गया। उत्पीड़न की तीव्रता 1978 से 1985 तक जारी रही।

झारखंड आंदोलन के सक्रिय समर्थक फादर मैथ्यू अरिपरांपिल ने उच्चतम न्यायलय में जंगलों में जमीनों पर आदिवासियों के अधिकारों को पुनःस्थापित करने के लिए एक जनहित याचिका दायर की। कई वर्ष मुकदमा चला। वाद के पक्ष में तमाम साक्ष्यों की मौजूदगी के बावजूद न्यायालय ने जंगलों पर अंग्रेजों के अन्यायपूर्ण कब्जे और उसे आजाद भारत सरकार द्वारा बरकरार रखने को उचित करार देते हुए आदिवासियों के पुनर्स्थापन के खिलाफ न्यायनिर्णय दिया। दिलचस्प बात है कि उसी भारत सरकार ने 2006 के वन अधिकार कानून के उद्देश्य को सूचित करते हुए यह स्वीकार किया कि आदिवासियों के साथ वन अधिकारों के संदर्भ में ऐतिहासिक रूप से अन्याय किया गया है जिसे दूर करने के खिलाफ वन अधिकार कानून बनाया जा रहा है।

गुवा गोलीकांड में जंगल पर अधिकारों के लिए संघर्षरत लोगों पर जुल्म पराकाष्ठा पर पहुंच गये जब पुलिस ने अस्पताल में घुसकर इलाज के लिए बिस्तरों पर पड़े 9 लोगों को गोली मार दी। उन शहीदों की याद में गुवा में एक स्मरण स्थल का निर्माण किया गया। 1980 के बाद हर साल 8 सितंबर को लोग श्रद्धांजलि अर्पित करने शहीद स्थल पर जाते हैं। शुरू के वर्षों में झारखंड मुक्ति मोर्चा के नेता और अन्य कुछ नेता भी श्रद्धांजलि अर्पित करने जाते थे। लेकिन अब विरले ही नेता जाते हैं। शहीदों को भूलकर अपने निजी स्वार्थ को सिद्ध करने में लग जाने के अलावा, नहीं जाने का एक कारण यह भी हो सकता है कि आराम के आदी हो चुके नेता जमशेदपुर से गुवा जाने वाली कष्टदायक सड़क पर से जाने से बचना ही बेहतर मानते हैं।

शहीदों को सम्मान क्यों नहीं ?

झारखंड आंदोलन का सारांश क्या है? झारखंडी जनों की अस्मिता को मान्यता, राजनैतिक स्वायत्तता और झारखंड के संसाधनों - जल, जंगल, जमीन और खनिजों - पर झारखंडी जनों के कब्जे के लिए संघर्ष ही झारखंड आंदोलन का सारांश है। शुरू में जमीन और जंगल पर झारखंडी जनता के कब्जे को बरकरार रखने के लिए 19वीं सदी में लगातार झारखंडी जनों के विद्रोह हुए। विद्रोहों को कुचल दिया गया और विद्रोहों को दोहराने से रोकने के प्रयास में छोटानागपुर और संथालपरगना काश्तकारी अधिनियम जैसी कुछ रियायतें दी गयीं, लेकिन जंगलों पर झारखंडी जनों को कब्जा वापस नहीं मिला, जिसके लिए वे आज भी संघर्षरत हैं।

जंगलों पर अधिकारों का संघर्ष झारखंड आंदोलन का एक केंद्रीय मुद्दा है। झारखंड आंदोलन सिर्फ अलग राज्य का आंदोलन मात्र नहीं है। झारखंड आंदोलन को मान्यता देने के साथ जंगल आंदोलन के शहीदों को सम्मान देने का बोध और चेतना भी जुड़ी है। झारखंड आंदोलन आज भी जारी है। पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, बिहार और उत्तरप्रदेश के झारखंडी-जन बहुल इलाकों को झारखंड राज्य में शामिल करने की माँग अभी हासिल करना बाकी है। झारखंड के संसाधनों पर, विशेषकर जंगलों और खनिजों पर जनहित के नाम से प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से पूँजीपतियों और उनके दलालों का कब्जा कायम है, जिसे उनसे छीनकर झारखंडी जनों का कब्जा कायम करने की जिम्मेदारी झारखंड आंदोलनकारियों पर अभी भी है। और तीसरी बात है झारखंड राज्य के प्रशासन को झारखंडी जनों को अपने हाथों में लेना होगा। और चौथा महत्वपूर्ण कार्यभार झारखंडियों की जमीनों की रक्षा का है, जिसके लिए छोटानागपुर और संथाल परगना काश्तकारी अधिनियमों और संविधान की पाँचवीं अनुसूची में दिये गये प्रावधानों को पूरी तरह से लागू कराना तथा इन अधिनियमों का उल्लंघन करके हस्तांतरित जमीनों को झारखंडी जनों को वापस दिलाना है। और अंत में पांचवां कार्यभार है जंगलों-जमीनों से विस्थापित लोगों को उचित मुआवजा और पुनर्वास दिलाना।

इन माँगों के संघर्ष में शहीद हुए लोगों को सम्मान दिये और दिलाये बिना तथा झारखंडी जनों के स्वाभिमान को स्थापित किये बिना झारखंड आंदोलन को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है। आज भी उन शहीदों को अपराधियों के रूप में अभिलेखों में दर्ज करके रखा गया है; कई आंदोलनकारियों पर आज भी अपराधिक मामले दर्ज हैं। झारखंड के संसाधनों को लूटने वाले झारखंड के दुश्मनों की दलाली करने वाले झारखंडी नेता बेशर्मी के साथ शहीदों की अवज्ञा कर रहे हैं। वे यह भूल रहे हैं कि उन्हीं शहीदों और आंदोलनकारियों की कुरबानियों से प्राप्त सुख-सुविधाओं में वे ऐश कर रहे हैं।

एक प्रतिष्ठित झारखंड आंदोलनकारी और पूर्व विधायक बहादुर उराँव, लगातार शहीदों को सम्मान दिलाने की माँग सरकार से करते आ रहे हैं। उन्होंने मार्च 2006 में और मार्च 2011 में इसी माँग के लिए अनशन किया। जब सरकार ने 2006 में उनको झारखंड आंदोलनकारी के रूप में सम्मानित करने के लिए आमंत्रित किया तो उन्होंने इस बिना पर उस आमंत्रण को ठुकरा दिया कि जबतक झारखंड राज्य निर्माण आंदोलन और जंगल आंदोलन के शहीदों को सम्मान नहीं दिया जाता वे ऐसे आमंत्रण को स्वीकार नहीं कर सकते।

जो राज्य और जन अपने शहीदों को सम्मान देकर अपना स्वाभिमान कायम नहीं रखते उनके भाग्य में गुलामी ही बदी रहती है।

सिंहभूम जिले में 1978 से 1985 तक आदिवासियों पर पुलिसी गोलीकांडों का एक विवरण

बिहार सरकार के लिए आदिवासियों पर गोली चलाना तो लगभग मनबहलाव का एक काम हो गया है। पिछले पांच वर्षों में अकेले सिंहभूम जिले में चांडिल, ईचाहातू, सेरेंगदा, कुंबिया, इलीगाड़ा, बंडाबेड़ा और ईचागढ़ में ये गोलीकांड हुए जिनमें वन अधिकारों, अधिक मजदूरी, रोजगार के बेहतर अवसरों, भोजन के लिए काम के कार्यक्रमों के कार्यान्वयन और राष्ट्रीय परियोजनाओं के लिए अधिग्रहीत जमीनों के लिए उचित मुआवजे की मांग करने के बदले में आदिवासियों को भून दिया गया। इन गोलकांडों में गुआ गोलीकांड और गंगाराम कालुंडिया की हत्या अपनी निर्ममता और गोलीकांड के बाद फैलाये गये आतंक के चरम रूप हैं।। उपरोक्त गोलीकांडों में से कुछ के विवरण नीचे दिये गये हैं।

1. चांडिल गोलीकांड (30-4-1978)

26 मार्च 1978 को सिंहभूम जिले के चांडिल प्रखंड में एक बहुत बड़ी रैली आयोजित की गयी। फॉरवार्ड ब्लॉक द्वारा यह रैली सुवर्णरिखा बहूद्देशींय परियोजना के खिलाफ प्रतिवाद करने के लिए आयोजित की गयी थी। इस परियोजना से चांडिल, नीमडीह और ईचागढ़ प्रखंडों में करीब 90 गांवों के 75,000 लोग विस्थापित होने वाले थे। एक लाख लोगों की रैली चार किलोमीटर चलकर चांडिल से बांध स्थल, चादलेंगी, गयी और वहां एक आम सभा में बदल गयी। सभा में गुस्से में गरजते हुए दिये जा रहे नारों के बीच यह निर्णय लिया गया कि एक सात-सूत्री मांगपत्र की पूर्ति के लिए 23 अप्रैल को सामूहिक रूप से आमरण अनशन किया जायेगा।

चांडिल से थोडी दूर जायदा पीडब्ल्यूडी डाक बंगला के बगल में पूर्वनिर्णय के अनुसार 23 अप्रैल को आमरण अनशन शुरू हुआ। एक शिविर खड़ा किया गया, सत्याग्रहियों ने बगल में बहती सुवर्णरिखा नदी में स्नान किया, सामने अवस्थित शिवमंदिर में सिर नवाया और अनशन प्रारंभ किया। 27 अप्रैल तक अधिकारियों ने सत्याग्रह पर कोई ध्यान-नहीं दिया। 28 अप्रैल को जायदा डाक बंगले पर तैनात पुलिस ने सत्याग्रहियों को देखने और उनका मनोबल बढ़ाने के लिए हर दिन हजारों की संख्या में आने वाले औरतों, मर्दों और बच्चों को रोकना शुरू किया। उसके पहले शिविर में यह खबर पहुंची कि अगले दिन किसी समय उपायुक्त वहां आयेंगे। उस समय उपायुक्त, पुलिस अधीक्षक और अन्य अधिकारीगण जायदा से 3 किलोमीटर दूरी पर चांडिल डाक बंगले में बैठे हुए थे।

अगले दिन सुबह उपायुक्त आये लेकिन वे सत्याग्रह शिविर में न जाकर वहां से कोई 100 गज दूर जायदा डाक बंगले में बैठे और सत्याग्रह में बैठे फॉरवार्ड ब्लॉक विधायक घनश्याम महतो को बुलाने के लिए आदमी भेजा। सत्याग्रहियों के साथ बात करके श्री महतो ने उपायुक्त के पास नहीं जाने का निर्णय लिया, और संदेशवाहक को इस अनुरोध के साथ उपायुक्त के पास भेजा कि वे खुद शिविर में आयें। उपायुक्त ने फॉरवार्ड ब्लॉक नेता को लाने के लिए मजिस्ट्रेट के.पी.सिंह को भेजा। इसे गिरफ्तार करने की कोई योजना का हिस्सा होने का संदेह करते हुए श्री महतो डाक बंगले के चारों तरफ स्थित जंगल के अंदर खिसक गये। दिन में 12 बजे के इर्द-गिर्द कोई 200 लाठीधारी और 40 राइफलधारी पुलिस डाक बंगले से निकल कर आये और सत्याग्रहियों पर हमला बोल दिया। उन्होंने शिविर को गिरा दिया और सत्याग्रहियों को ठेलकर बगल में खड़ी पुलिस की गाड़ी में चढ़ने के लिए मजबूर किया। प्रतिरोध करनेवालों को मारा गया। महात्मा गांधी के साथ नमक सत्याग्रह में भाग लिये हुए 80 वर्षीय बिमलेंदु दास को चार पुलिसवालों ने घसीटकर एक ट्रक में फेंक दिया। सभी गिरफ्तार लोगों को सीधे सरायकेला जेल ले जाया गया जो रहस्यमय ढंग से कैदियों की मौतों के लिए बदनाम है।

गिरफ्तारी के खिलाफ जोरदार प्रतिक्रिया हुई। अगले दिन बहुत-से गामीण शिविर स्थल पर पहुंचे और उनमें से हरेक अनशन पर बैठने के लिए दृढ़संकल्प लिये हुए था। सुबह 11 बजे तक कोई 8000 लोग वहां जमा हो गये जिनमें 600

महिलायें और बच्चे शामिल थे। चूंकि पुलिस ने शिविर को ध्वस्त कर दिया था इसलिए वे एक नया तंबू खड़ा करने लगे। तंबू खड़ा करते समय मजिस्ट्रेट के.पी.सिंह वहां आया। उसने लोगों को चेतावनी दी, "तुम लोगों को यहां बैठने पर मनाही है"।

घनश्याम महतो उनके सामने आये और बोले, "फिर भी हमलोग बैठेंगे"। तंबू फिर से खड़ा करने की प्रक्रिया जारी रही। सिर्फ छत बनाने का काम बाकी था। लड़के जंगल से बांस ले आये। तब मजिस्ट्रेट ने आंसू गैस छोड़ने का आदेश दिया। कुछ लोग तितर-बितर हो गये पर अधिकतर जमीन पर बने रहे। आंसू गैस छोड़ना रुकते ही लोग फिर से जुट गये और छत बना रहे दो नौजवान कार्यस्थल में ऊंचाई पर चढ़े हुए थे। अचानक पुलिस के जवान गोलियां चलाने लगे। ऊपर चढ़े हुए नौजवान गोली लगने से खून से लथपथ नीचे गिर गये और मर गये। तब पुलिसवाले भीड़ पर गोलियां चलाने लगे। लोग पहाड़ियों और जंगल की ओर भागने लगे। राइफलधारी पुलिस उनका पीछा करने लगी। इस पुलिसी कार्रवाई में चार लोग मारे गये थे। एक संगीन से मारा गया था।

(निर्मल सेनगप्ता द्वारा संपादित "फोर्थ वर्ल्ड डायनामिक्सः झारखंड", पृ. 127, 130–131 से लिया गया।)

2. ईचाहातू गोलीकांड (6-11-1978)

6 नवंबर 1978 को वनक्षेत्रों के पास रहने वाले आदिवासियों ने गोयलकेरा प्रखंड के ईचाहातू गांव में एक सभा बुलायी। इस बैठक का उद्देश्य अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने पर चर्चा करना और साल का जंगल काटकर उसकी जगह सागवान के पेड़ लगाने के खिलाफ प्रतिवाद करना था क्योंकि वे साल के पेड़ों पर बहुत ज्यादा निर्भर रहते हैं। सभा का एक और उद्देश्य गोयलकेरा बाजार में आदिवासी महिलाओं पर लाठीचार्ज के खिलाफ प्रतिवाद करना भी था।

दोपहर बैठक शुरू करने के ठीक पहले बीडीओ श्री केरकेट्टा, डीएफओ एस.पी.सिंह और गोयलकेरा थाना का दारोगा हथियारबंद पुलिस जवानों के साथ वहां आये और लोगों को धमकाने लगे। उन्होंने तीन बार हवाई फायरिंग भी की। इसके फलस्वरूप वहां काफी उत्तेजना फैल गयी। तब पुलिस ने बिना किसी चेतावनी के भीड़ पर गोली चलाना शुरू कर दिया। इस गोलीकांड में जुगडी गांव का महेश्वर जामुदा घटनास्थल पर ही मारा गया। कई लोग घायल हो गये। पुलिस घायलों को चाईबासा ले गयी जहां उनमें से एक मर गया। पुलिस ने गोली चलाने के पहले भीड़ को तितर-बितर करने के लिए न लाठी चार्ज किया, न ही आंसू गैस छोड़ा।

(विस्तृत विवरण के लिए पीयूसीएल की रिपोर्ट "रिप्रेशन इन सिंहभूम", पृष्ठ. 9–12 देखें।)

3. सेरेंगदा गोलीकांड (25-11-1978)

25 नवंबर 1978 को सेरेंगदा गांव में साप्ताहिक हाट में एकत्रित आदिवासियों पर पुलिस ने 12 चक्र गोली चलायी। इस गोलीकांड में तीन व्यक्ति घटना स्थल पर ही मारे गये और कई लोग गंभीर रूप से घायल हो गये। (विस्तृत विवरण के लिए पीयूसीएल की रिपोर्ट "रिप्रेशन इन सिंहभूम", पृष्ठ 12–15 देखें।)

4. गुआ गोलीकांड (8-9-1980)

सितंबर 1980 का गुवा गोलीकांड 1978–85 के दौर के दमन उत्पीड़न का एक चरम रूप था। घटना का सिलसिला इस प्रकार हैः जंगलों में अपने गाँवों की जमीनों पर फिर से दखल करने और वहाँ जंगल काटकर फिर से खेती करने की लोगों की कार्रवाई पर सरकार की दमन की चालू प्रक्रिया में वन विभाग अगस्त 1980 में 108 लोगों को गिरफ्तार करके गुवा थाना ले गया। झारखंड मुक्ति मोर्चा से जुड़े मछुवा गगराई, सूलापुर्ती, मोरा मुंडा, देवेंद्र मांझी, बहादुर उराँव आदि इस आंदोलन के नेतृत्व में थे। सूला पुर्ती ने गिरफ्तारी के खिलाफ गुवा थाना घेराव की योजना बनायी। देवेन्द्र मांझी ने बहादुर उराँव और भुवनेश्वर महतो को आंदोलन का नेतृत्व के लिए गुवा भेजा।

8.9.1980 को गुवा हवाई अड्डे में भीड़ जुटी। माँग-पत्र बनाया गया और लोग बाजार में मीटिंग के लिए आगे बढ़े। लोगों की माँगें थीं : 1) 108 गिरफ्तार लोगों को रिहा करो; 2) पुलिस जुल्म बंद करो; 3) गुवा, जामदा के मजदूरों को स्थायी करो; 4) जमीन के लिए मुआवजा दो ; 5) झारखंड प्रांत अलग करो।

नारा लगाते हुए जुलूस थाना के बगल से बाजार की ओर बढ़ा। पुलिस ने जुलूस को रोका और वापस जाने को कहा। एलआरडीसी फ्रांसिस दीन मजिस्ट्रेट के रूप में वहाँ तैनात थे। जुलूस के नेतृत्व ने उनको माँग-पत्र सौंपा और कहा कि एक घंटा मीटिंग करके वे चले जायेंगे। जुलूस बाजार पहुँचा। मीटिंग में कोई 5000 लोग जुटे थे।

मुखिया के नाम से परिचित एक स्थानीय वैशाखू गोप के जोशीले भाषण से भड़ककर पुलिस ने माइक पर मीटिंग खतम करने के लिए कहा। पुलिस ने नेताओं को सरेंडर करने के लिए कहा। मुखिया और भुवनेश्वर ने सरेंडर कर दिया लेकिन बहादुर और सूला पुर्ती ने सरेंडर करने से इनकार कर दिया।

फिर से पुलिस ने 5 मिनट में मीटिंग खतम करने की घोषणा की। पुलिस मीटिंग को चारों तरफ से घेर रखी थी। बहादुर ने पुलिस से कहा कि हम शांतिपूर्वक चले जायेंगे, हमें जाने दिया जाये। लेकिन पुलिस ने लाठीचार्ज करना शुरू कर दिया। फिर फायरिंग की गयी। जीतू सोरेन और बागी देवगम वहीं गोली से मारे गये। इसके खिलाफ आंदोलनकारियों की ओर से तीर चलने लगे। आधा घंटे तक तीर-गोली की मुठभेड चलती रही। कई आदिवासी और पुलिस घायल हुए। तीन (चार) पुलिस वाले मारे गये। लोगों ने 4 बंदूकें लूट ली (जिन्हें लोगों ने बाद में लौटा दिया)। गोयलकेरा का ईश्वर सरदार वहीं रुककर घायलों को गुवा अस्पताल ले गया।

सबसे ज्यादा कायरतापूर्ण घटना उसके बाद घटी। वहां से आधा किलोमीटर की दूरी पर इस्को अस्पताल में कुछ घायल पुलिसकर्मी इलाज के लिए लाये गये थे और उसके कुछ ही समय बाद कुछ घायल आदिवासी लाये गये। लेकिल जैसे ही 9 आदिवासियों की पहली टोली अस्पताल लायी गयी पुलिस ने उनको घेर लिया, उनको मारा और उनको गोली मार दी। सरकारी वक्तव्य के अनुसार अस्पताल में 9 चक्र गोलियां चलायी गयीं जिससे 9 आदिवासी मारे गये, जिनमें ईष्वर सरदार भी शामिल थें। यह घटना हाट में हुए पहले गोलीकांड के एक घंटे बाद शाम को 5 बजे सभी अस्पताल कर्मचारियों की मौजूदगी में घटी। इससे घबराकर अस्पताल कर्मचारियों ने भागकर आपरेशन रूम में शरण लिया। रात अंधेरा होने तक लाशें वहीं पड़ी रहीं और अगले दिन सुबह तक खून पड़ा रहा। इसीलिए गुआ बाहर के लोगों के लिए दो दिनों तक बंद रहा; एक आदिवासी मंत्री और मुख्य सचिव को भी गुआ में प्रवेश करने नहीं दिया गया। बिहार में आदिवासियों को मंत्रियों के रूप में रखा तो जाता है पर उन पर विश्वास नहीं किया जाता है।

प्रशासन ने राँची से गोरखा रेजिमेंट मंगाया। चारों तरफ दूर-दूर तक गाँवों में दमन कांड चलाया गया। लोगों को तरह-तरह की यातनायें दी गयीं। पुलिस दमन के खिलाफ झारखंड बंद का आह्वान दिया गया जिसका गोपाल राव और धनबाद के मजदूर नेता ए.के. राय ने समर्थन किया। धनबाद में 200 से ज्यादा लोग गिरफ्तार हुए। चक्रधरपुर में भयानक दमन चला। बांझी कुसुम से चक्रधरपुर तक भयानक स्थिति थी। बहादुर उराँव के घर को ढाह दिया गया। बहादुर के नवजात जुड़वाँ बच्चे ठंड से बीमार होकर मर गये। बहादुर भूमिगत मारा-मारा घूमते रहे।

मछुवा गगराई, मोरा मुंडा, राधे सुंब्रोई आदि नेता सहित 200 से ज्यादा लोग गिरफ्तार किये गये। 400 से 500 लोगों पर वारंट जारी किये गये थे। तीर-धनुष रखने पर पाबंदी लगा दी गयी थी।

उस समय शिबू सोरेन सक्रिय हो उठे। 10 अक्टूबर 1980 को चाईबासा में आमसभा आयोजित की गयी। 144 धारा लगा दी गयी थी। फिर भी बैरिकेड तोड़कर 10–15 हजार लोग सभा में शामिल हुए। बाद में झारखंड मुक्ति मोर्चा ने सरकार पर दबाव डालकर तीर-धनुष पर से पाबंदी हटवायी।

गुवा नरसंहार के बाद दमनचक्र

गुवा की उपरोक्त घटना के बाद आदिवासियों पर जो हिंसक दमन-चक्र चलाया गया उसका विस्तृत विवरण ट्राइबल डॉक्युमेंटेशन सेंटर, गुटुसाइ, चाईबासा, के श्री ए.राज द्वारा प्रकाशित पुस्तिका "गुआ 8 सितंबर", 1980, पृ. 26–34 में दिया गया है।

5. कासीजोआ गोलीकांड (7-10-1980)

7 अक्टूबर 1980 को पुलिस ने गोयलकेरा थाना क्षेत्र के अंतर्गत कासीजोआ गांव पर हमला किया। हमले का

कथित कारण कुछ लोगों को गिरफ्तार करना था जो कथित रूप से जंगल काटने और वैसे ग्रामीणों से पैसा वसूलने में शामिल थे जिन्होंने आंदोलन में भाग नहीं लिया था। महिलाओं और बच्चों सहित 50 ग्रामीणों की एक भीड़ ने पुलिस को गांव में घुसने से रोकने की कोशिश की। तब पुलिस ने भीड को तितर-बितर करने के लिए गोली चलायी। दो चक्र गोलियां चलायी गयीं पर कोई नहीं मारा गया।

6. बाइपी गोलीकांड (24-11-1980)

यह घटना आदिवासियों पर पुलिस की बर्बरता को दिखाता है। 24 नवंबर 1980 की दोपहर 3 बजे पुलिस सुनिया जोजो नामक एक व्यक्ति की खोज में बाइपी गांव गयी। पुलिस के साथ चक्रधरपुर का बीडीओ और सर्किल ऑफिसर भी थे। जब वे सुनिया जोजो को उसके घर में नहीं पाये तब पुलिस ने उसके घर से उसका सामान ले जाना चाहा। उस समय वहां मौजूद ग्रामीणों के कथनानुसार पुलिस सुनिया के घर की महिलाओं के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार करना शुरू किया। इससे ग्रामीण गुस्से में आ गये और उन्होंने पुलिस को वापस जाने के लिए मजबूर किया। पास के एक तालाब में दो चरवाहे, लूला बोदरा और टिकुड लागुरी, अपनी गायों को धो रहे थे। उनको देखकर पुलिस ने पागलों की तरह उनपर गोली चलायी। इससे दोनों बुरी तरह घायल हो गये। टिकुड लागुरी को पेट में गोली लगी थी और लूला बोदरा को बायीं जांघ में गोली लगी थी। चरवाहों की चीखें सुनकर ग्रामीण उनके पास जुटने लगे। ग्रामीणों को तितर-बितर करने के लिए पुलिस ने फिर से गोली चलायी। गंभीर रूप से घायल टिकुड लागुरी 25 नवंबर की सुबह मर गया। ग्रामीण घायल लूला बोदरा को इलाज के लिए चाईबासा सदर अस्पताल ले गये।

लूला बोदरा के अनुसार, जब पुलिस वाले गांव में अपनी मनमर्जी नहीं कर सके तब उन्होंने गुस्से से पागल होकर बेगुनाह लूला और टिकुड पर गोली चलायी।

7. टोंटो गोलीकांड (25-4-1981)

जब आदिवासी महिलायें और बच्चे चाईबासा में एस.डी.ओ. के सामने प्रतिवाद कर रहे थे तब पुलिस ने उन पर गोली चलायी। अगले दिन पुलिस ने गांव से 59 लोगों को गिरफ्तार किया।

8. कुइरा गोलीकांड (26-10-1981)

26 अक्टूबर 1981 को आदिवासी गोयलकेरा प्रखंड में कुइरा हाट में आमसभा कर रहे थे। तभी पुलिस अधीक्षक रणधीर वर्मा ने भीड पर तीन चक्र गोलियां चलायी जिससे एक व्यक्ति घायल हो गया। सात व्यक्ति गिरफ्तार किये गये।

प्राप्त सूचना के अनुसार, कोल्हान रक्षा संघ ने सभा का आयोजन किया था। जब आदिवासी अपनी परंपरागत पद्धति से गाजे-बाजे के साथ गाते-बजाते हुए आ रहे थे तब पुलिस ने उनके नेताओं को गिरफ्तार करने के लिए उनको घेर लिया। इसके चलते लोगों में खलबली मच गयी और आदिवासी इधर-उधर दौडने लगे। पुलिस के जवान भागते हुए ग्रामीणों का पीछा करने लगे। ग्रामीणों ने पुलिस पर तीर चलाये जिससे दो जवान घायल हुए। तब पुलिस ने भीड़ पर दो चक्र गोलियां चलायी जिससे एक ग्रामीण घायल हो गया। पुलिस अधीक्षक वर्मा ने भी अपने रिवॉल्वर से तीन या चार चक्र गोलियां चलायीं।

पुलिस के इस अचानक के हमले में कई लोग घायल हो गये क्योंकि इस अमानवीय हमले के खिलाफ प्रतिवाद कर रही महिलाओं ने गोलियों को अपने ऊपर ले लिया था।

9. कुंबिया गोलीकांड (5-11-1981)

5 नवंबर 1981 को पुलिस ने गुआ के पास कुंबिया गांव के आदिवासियों पर गोली चलायी। उसके कुछ दिन पहले किसी सोमा कुमार नामक व्यक्ति को गिरफ्तार करने के लिए पुलिस ने गांव में प्रवेश किया था और गांव के कुछ घरों को तोड-फोड दिया था। पुलिस ने सोमा कुमार के पिता को गिरफ्तार भी कर लिया और जेल भेज दिया। पुलिस ने बंदूक के कुंदे से एक बूढी महिला को मारा और उसके दांत तोड़ दिये। पुलिस के इन बर्बर अत्याचारों के कारण लोग गुस्से में आ गये और उन्होंने पुलिस की गाड़ियों को आने से रोकने के लिए सड़क पर अवरोध खडा कर दिया।

बांधकर तपती अलकतरे की सड़क पर लेटने के लिए मजबूर किया गया। तब दो पुलिस वालों ने एक लाठी उसके दोनों पैरों के बीच घुसायी। कमर के नीचे उसके शरीर को सीधे ऊपर की ओर उठाया गया, शरीर का बाकी हिस्सा अभी भी सड़क पर था।

एक प्रत्यक्षदर्शी द्वारा दिया गया यातना का विवरणः डी.एस.पी. दीपक वर्मा एक छड से बीदर नाग के पैरों पर मारने लगा। थोड़े ही देर में एक और पुलिस अधिकारी मारने में जुट गया। 1000 लोगों की भीड भौंचक इस पिटाई को देखती रही। बीदर नाग की पत्नी शांति भी उनमें से एक थी। फिर भी पुलिस अधिकारी तब तक पीटते रहे जबतक वे थक नहीं गये और लाठियां टूट नहीं गयीं। शांति बेहोश हो गयी, बीदर अचेत गिर पड़ा।

तब पांडे की बारी आयी। उसे भी उसी तरह यातना दी गयी। उसके पैर टूट गये और उसके नखून उखड आये। दूसरों के साथ भी वैसा ही किया गया। करीब एक घंटे तक यातना जारी रही। तब पुलिस ने वहां एकत्रित लोगों को ललकारा कि अगर उनको हिम्मत हो तो आगे आयें। किसी ने भी हिम्मत नहीं की।

पिटाई के बाद पीडितों को थाना ले जाया गया। थाने में बीदर नाग बेहोश गिर पड़ा और रात 8 बजे मर गया। 25 जून को पुलिस ने "अज्ञात लोगों" के खिलाफ खून का एक मामला दर्ज किया। पुलिस द्वारा की गयी एक विभागीय जांच में दीपक वर्मा और उसके दो अन्य अधिकारियों को दोषी पाया गया। कुछ समय के लिए तीनों अफसरों को निलंबित किया गया। पर शीघ्र ही उनको वापस बहाल कर लिया गया और उन पर सभी मामले हटा दिये गये।

16. झींकपानी गोलीकांड (7-10-1983)

यह घटना 7 अक्टूबर 1983 को झींकपानी में एसीसी सीमेंट कारखाने में घटी। वह वेतन देने का दिन था। मजदूरों ने पाया कि उनके वेतन से 200 से 250 रु. तक काट लिये गये हैं। कंपनी अधिकारियों के अनुसार कंपनी ने इसकी योजना बनायी थी। लेकिन अधिकारियों ने अपनी गलती नहीं सुधारी। जब उससे मजदूर आंदोलित हुए तो उन पर गोली चलायी गयी। उस गोलीकांड में दो व्यक्ति मारे गये। गोलीकांड के बाद कंपनी के अधिकारियों ने पुलिस की मिलीभगत से कई बेगुनाह आदिवासियों को झूठे मुकदमों में फंसाया और वे जेल में डाल में दिये गये।

झारखण्ड आंदोलन के कुछ शहीदों की सूची

सन	शहीदों के नाम	स्थान
1978	पहाडू महतो, गदाधर महतो व दो अन्य	जाइदा चांडिल गोलीकांड
1978	माहेश्वर जामुदा	इचाहातू गोलीकांड
1978	मांगी लोमगा	उटूटोवा गोलीकांड
1978	सोमनाथ लोमगा, लूपा बूड, दुविया होनहागा	सरेंदा गोलीकांड
1980	तिकुड़ लागुरी	बाईपी गोलीकांड
1981	टेपा हेम्बरोम	सरजोमहातू कुईड़ा गोलीकांड
1980	जीतू सुरीन	गुवा गोलीकांड
	बगी देवगम	गुवा गोलीकांड

सन	शहीदों के नाम	स्थान
	चूरी हांसदा	गुवा गोलीकांड
	चंद्रो लागुरी	गुवा गोलीकांड
	गांडा होनहांगा	गुवा गोलीकांड
	रामो लागुरी	गुवा गोलीकांड
	जुरा पुरती	गुवा गोलीकांड
	चेंतन चम्पिया	गुवा गोलीकांड
	रेंगो सुरीन	गुवा गोलीकांड
	ईश्वर सरदार	गुवा गोलीकांड
1982	गंगाराम कालुन्डिया	इलीगाड़ा हत्या काण्ड
1982	शेख सरफुल एवं 1 स्कूली छात्र	मांडर गोली काण्ड
1982	अजीत महतो	तिरुलडीह गोली काण्ड
	धनंजय महतो	तिरुलडीह गोली काण्ड
1982	वीदर नाग	गुवा हत्या काण्ड
1984	अश्विनी कुमार सवैया	कोल्हान शहीद
1984	लाल सिंह मुंडा	वन्दगांव हत्या काण्ड
1985	अन्थोनी मूर्मू एवं 14 साथी	बांझी हत्या काण्ड
	मदन मूर्मू	बांझी हत्या काण्ड
	मंगडू मुर्मू	बांझी हत्या काण्ड
	मुन्शी मूर्मू	बांझी हत्या काण्ड
	त्रिभूवन मरांडी	बांझी हत्या काण्ड
	दुमचा येसरा	बांझी हत्या काण्ड
	अन्ना मूर्मू	बांझी हत्या काण्ड
	बड़का टुडू	बांझी हत्या काण्ड
	ईश्वर मुर्मू	बांझी हत्या काण्ड
	कादन मुर्मू	बांझी हत्या काण्ड
	भोदरो हेम्ब्रम	बांझी हत्या काण्ड
	पण्डा मराण्डी	बांझी हत्या काण्ड
1989	मछुआ सगराई	

वनाधिकार कानून के बावजूद बेदखलीकरण क्यों?

- जेवियर कुजूर

लंबे संघर्ष के बाद वर्ष 2006 में जब वनाधिकार कानून बना तो कहा जा रहा था कि यह एक ऐतिहासिक कानून है। इससे आदिवासयों-वन निवासियों को न्याय एवं आजादी मिलेगी। उन परं षोशण, अत्याचार और दमन का अंत होगा। इससे वनाश्रित समुदायों में एक खुशी की लहर एवं उम्मीद जगी थी। जंगल अधिकार आन्दोलन से जुड़े संगठनों और आन्दोलनकारियों में भी उमंग और उत्साह जगा था। लेकिन इस कानून को लागू करने की प्रक्रिया के एक साल बाद ही उम्मीद, उमंग और उत्साह क्षीण होने लगा क्योंकि वनाधिकार कानून बनने के बाद भी आदिवासियों-वन निवासियों को समुचित अधिकार नहीं मिल रहे हैं। अभी भी षोशण, दमन, विस्थापन और बेदखलीकरण जारी है।

आन्दोलन, जनसंघर्ष और वैश्विक स्तर पर पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन से उठते सवालों के दबाव में भारत सरकार ने वनाधिकार कानून तो बना दिया, परन्तु जब इसे लागू करने की बात आयी तो सरकार उदासीन है। उधर वनभूमि के दावेदारों के दावों में वनविभाग (रेंजर, फोरेस्टर, डीएफओ) द्वारा भारी कटौती की जा रही है। सरकार वनभूमि पर पट्टा देने के नाम पर दावेदारों को सिर्फ 30--40 डिसमिल से लेकर अधिक से अधिक एक-दो एकड़ जमीन की मंजूरी देकर व्यक्तिगत वन अधिकार प्रमाण-पत्र दे रही है और वन-संसाधनों पर समुदाय के अधिकारों को तो मंजूरी दे ही नहीं रही है।

वनाधिकार कानून में मुख्य रूप से तीन अधिकार दिये गये हैं : 1. वनभूमि पर वन हक प्रमाण-पत्र पाने का हक, 2. गैर इमारती लकड़ी वनोपज के संग्रहण एवं बिक्री का हक और, ३. जंगल प्रबंधन का हक। इसके अलावा वन ग्राम को राजस्व ग्राम दर्जा मिलेगा और वहां भी विकास एवं कल्याण कार्यक्रम चलेगा। विकास कामों के लिए एक हेक्टेयर यानी ढाई एकड़ वनभूमि का उपयोग किया जा सकता है लेकिन इस शर्त के साथ कि उस स्थल पर 75 से ज्यादा पेड़ नहीं कटने चाहिए। वनभूमि का वन हक प्रमाण-पत्र उन आदिवासियों को मिलेगा जिन्होंने 13 दिसंबर 2005 तक वनभूमि पर घर या खेती के लिए कब्जा-दखल कर लिया था। लेकिन आदिवासियों के अलावा अन्य परम्परागत वन निवासियों को 75 सालों से वन क्षेत्र में रहने का प्रमाण देना होगा। वनाधिकार कानून को लागू करने के लिए नियमावली बनायी गयी है। इसके मुताबिक चार स्तरीय समितियों का गठन करना है जो इस प्रकार हैं : ग्राम सभा और वन अधिकार समिति, अनुमंडल स्तरीय वनाधिकार समिति, जिला स्तरीय वनाधिकार समिति और राज्य स्तरीय वनाधिकार निगरानी समिति। गांव स्तर की समिति को छोड़कर ऊपर की समितियों में एसडीओ और डीसी अध्यक्ष के रूप में रहेंगे और कल्याण विभाग, वन विभाग और राजस्व विभाग के अधिकारी तथा समुदाय के प्रतिनिधि सदस्य के रूप में रहेंगे।

वनाधिकार कानून में उल्लिखित कोई भी अधिकार सही तरीके से लागू नहीं हो रहे हैं। अपवाद को छोड़ दिया जाये तो वन विभाग तो इस कानून को लागू नहीं करना ही चाहता है। वन विभाग के पास भारतीय वन अधिनियम 1927 और भारतीय वन्य जीव संरक्षण अधिनियम 1980 जैसे कड़े कानून मौजूद हैं। अतः वनाधिकार कानून 2006 बनने के बाद भी वन विभाग अंग्रेजों के औपनिवेशिक कानूनों के नक्शे कदम चल रहा है। वह अपने में बदलाव नहीं लाना चाहता। नये वनाधिकार कानून को लागू करने के बदले वह पुराने कानूनों को ही लागू करके जंगल और जनता पर अपना दबदबा बनाये रखना चाहता है। उन्हीं कानूनों के आधार पर वह अभी भी गरीब जनता पर शोषण एवं अत्याचार कर रहा है और कई लोगों पर झूठे केस-मुकदमे कर उन्हें जेल भेज रहा है। देश में कई स्थानों में वन विभाग द्वारा पुलिस का इस्तेमाल कर अभी भी कहीं-कहीं बेदखलीकरण, घरों और बस्तियों को तोड़ने या जलाने तथा कहीं-कहीं लाठी-गोली और हत्या जैसी घटनाओं को भी अंजाम दिया जा रहा है। अप्रैल 2007 में मध्यप्रदेश के रीवा जिले में घटेहा गांव के सैंकड़ों घरों को जलाकर नष्ट कर दिया गया था, लाठीचार्ज और पुलिस फायरिंग में महिलाओं सहित बहुत-से लोग घायल हुए थे, कई सक्रिय कार्यकर्ताओं को जेल में डाला गया था। वर्ष 2009 में जलपाइगुड़ी जिले के बक्सा रिजर्व फॉरेस्ट के अंदर ग्रामसभा द्वारा वन प्रबंधन के अधिकारों को लागू करने में अगुवाई कर रहे सुरेन्द्र उरांव को वन विभाग और पुलिस ने गोली मार कर

हत्या कर दी। 30 सितंबर 2010 को असम के कोकराझाड़ जिले में वनविभाग के उकसावे पर उसके दलालों ने झारखण्डी आदिवासियों के 600 घरों को तोड़ा। संथालों की बस्तियों को जला दिया। उन्हें भागकर कई दिनों तक जंगलों में छिपकर या शरणार्थी शिविरों में रहना पड़ा। 21 जून 2011 को असम के गुवाहाटी स्थित सचिवालय के समक्ष कृषक संग्राम समिति के आह्वान पर वनभूमि की बंदोबस्ती के लिए प्रदर्शन कर रहे आदिवासियों पर पुलिस ने लाठीचार्ज और फायरिंग किया जिसमें एक बच्चे सहित तीन लोग शहीद हो गये। 2006 के बाद झारखण्ड में तो घरों को जलाने या हत्या जैसी घटना मेरी जानकारी में नहीं घटी है। लेकिन वर्ष 2005 में गढ़वा जिले के कुम्बाखुर्द गांव में वन विभाग की शह पर उसके दलालों ने वनग्राम की बस्तियों को जलाकर नष्ट कर दिया था। झोपड़ी के अंदर तीन वर्षीय एक बच्ची भी जलकर मर गई। बच्ची की मां उसे निकालने के लिए गयी थी, पर दलालों ने उसे मार-पीट कर भगा दिया। वर्ष 2008 में पश्चिम सिंहभूम में झारखण्ड जंगल बचाओ आन्दोलन के बंदगांव प्रखण्ड प्रभारी मनी मुण्डा को भी करीब 2 महीने तक जेल में रखा गया था। 11 अगस्त, 2011 को जब वह कोर्ट में हाजरी के लिए गया था तो उसे फिर से जेल में बंद कर दिया गया। मार्च 2010 में गिरिडीह जिले के देवरी प्रखण्ड के अन्तर्गत संथाल टोला के घरों को तोड़ा गया और घरों के सारे सामानों को ट्रैक्टर में लादकर ले जाया गया तथा स्टीफन हांसदा को 17 महीने जेल में रखा गया था। 2010 में खरसवां प्रखण्ड के हरिभांजा गांव में वनभूमि पर अतिक्रमण के नाम पर वन विभाग ने आदिवासियों की करीब 7 झोपड़ियों को तोड़ा और पुइतु सिजुई को जेल भेजा गया। इसी तरह सितंबर 2010 में गढ़वा के भवनाथपुर के झारखण्ड जंगल बचाओ आन्दोलन के प्रखण्ड प्रभारी बिन्दूराम भइंयां को तीन महीने तक जेल में रखा गया था। इस तरह की और कई घटनाएं हुई हैं।

फिलहाल पश्चिम सिंहभूम के मनोहरपुर प्रखण्ड से खबर है कि सेंट्रल रिजर्व फोर्स द्वारा माओवाद के खिलाफ 1 अगस्त 2011 से चले कॉम्बिंग ऑपरेशन में दो वनग्रामों को तोड़-फोड़ कर हटा दिया गया है। एक गांव का नाम है आरउली जोजोबा। सीआरपी के जवानों ने इस गांव के आदिवासियों के साथ मार-पीट किया और महिलाओं के साथ बलात्कार भी किया। बरसाती बारिश के समय भी उन्हें बेघर कर दिया गया है। आखिर इनका क्या क़सूर है? क्या वनग्रामों के आदिवासियों को देश के लोकतंत्र में जीने का अधिकार या मानवाधिकार नहीं है? फिर वनाधिकार कानून बनने के बाद भी वन निवासियों का बेदखलीकरण क्यों? गौरतलब है कि इन गांवों की जमीन को जिन्दल कंपनी खदान के लिए अधिग्रहण करना चाह रही है। लेकिन गांव के आदिवासी इसका विरोध कर रहे हैं। हो सकता है कि माओवाद का बहाना बनाकर जिंदल कंपनी के इशारे पर इन गांवों का जबरन विस्थापन और दमनकारी कार्रवाई की जा रही है।

झारखण्ड में सरकार द्वारा खदान के लिए कई कंपनियों के साथ समझौते किये गये हैं। लोहा, कोयला, बॉक्साइट आदि कई खदान जंगल क्षेत्रों में पड़ते हैं। सरकार और केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा मंजूरी मिल जाने से वनभूमि का भी अधिग्रहण किया जाता है। खदान और उद्योग से जंगल नष्ट होते हैं। नदियां, झरने और खेत प्रदूषित हो जाते हैं। प्रदूषण से बीमारियां फैलती हैं। प्रदूषित पानी पीने से मनुष्य और जानवर मरने लगते हैं। इन सब कारणों से कई बार स्थानीय लोग खदान, विस्थापन और भूमि अधिग्रहण का विरोध करते हैं।

वनाधिकार कानून की धारा 3 (झ) के तहत वन संरक्षण एवं प्रबंधन का अधिकार तथा धारा 5 के तहत जंगली जीव-जन्तु और जैवविविधता के संरक्षण एवं प्रबंधन का अधिकार गांवसभा को है। वन में निवास करने वाले आदिवासियों और अन्य परंपरागत वन निवासियों को उनके सांस्कृतिक और प्राकृतिक विरासतों को सुरक्षित रखने का अधिकार है। इन्हें सामुदायिक वन संसाधनों तक पहुंच के साथ ही ऐसे किसी क्रियाकलाप को रोकने का अधिकार भी है जिससे वन्यजीव, वन और जैवविविधता पर बुरा असर पड़ता हो। लेकिन सरकार और वन विभाग समुदाय के हाथों इन अधिकारों को नहीं देना चाहती है। अगर ये अधिकार गांव समुदाय और गांवसभा को मिल जाते हैं तो पूंजीपति और खदान कंपनी वनभूमि का आसानी से अधिग्रहण नहीं कर सकता और उनकी मनमानी नहीं चल सकती। मगर सरकार कंपनियों और कॉरपोरेट हितों को संरक्षण देना चाहती है। इन्हीं सब कारणों से वन विभाग और सरकार पिछले दरवाजे से फिर से संयुक्त वन प्रबंधन को लागू करना चाहती है। इसका विरोध करना होगा, नहीं तो वनाधिकार कानून का कोई मतलब नहीं रह जायेगा।

वनाधिकार कानून के तहत टिम्बर को छोड़कर सारे वनोपज, जैसे- बांस, बेंत, बिड़ी पत्ता आदि को भी बेचने का अधिकार लोगों को है। लोग इनको जमा करके गांव से लेकर शहर तक कहीं भी बेच सकते हैं। इसके लिए उन्हें सरकार या वन विभाग से किसी प्रकार की परमिट की दरकार नहीं है। यह परमिट अब गांवसभा दे सकती है। लेकिन वन विभाग अभी भी बीड़ी पत्ता को छोड़ने को तैयार नहीं है क्योंकि बीड़ी पत्ता करोड़ों रु. का व्यापार है। वन विभाग बीड़ी पत्ता का ठेका ठेकेदारों को देती है और उनसे लाखों रुपये वसूलती है। इससे वन विभाग के लोग मालामाल होते हैं। वनाधिकार के तहत वनग्रामों को राजस्व ग्राम का दर्जा देना है, लेकिन यह काम भी अभी तक नहीं हो रहा है।

वनाधिकार कानून के लागू हुए साढ़े तीन साल हो गये। परन्तु अभी भी कई ऐसे गांव या क्षेत्र हैं जहां जंगल आश्रित लोगों को इसकी जानकारी ठीक से नहीं है। बहुत-से लोग अभी भी दावा-पत्र नहीं भरे हैं क्योंकि कई जगह दावेदारों को दावा-पत्र मिले ही नहीं हैं। कहीं-कहीं लोग दावा-पत्र भर रहे हैं, परन्तु ब्लॉक में जमा नहीं लिया जा रहा है। कई स्थानों पर अमीन उपलब्ध न होने के कारण वनभूमि का सर्वे और नापी-नक्शा का काम नहीं हो रहा है। झारखण्ड में अन्य परंपरागत वन निवासियों को अभी तक वन भूमि का अधिकार नहीं दिया जा रहा है। झारखण्ड सरकार के अनुसार दिसंबर 2010 तक कुल 33,216 दावा-पत्र जमा हुए थे जिनमें से 9,142 लोगों को वन हक प्रमाण-पत्र मिले। इनमें से कुल 14,993 एकड़ जमीन लोगों को मिली और 15,379 दावे खारिज कर दिये गये।

झारखण्ड में 2007 में करीब 16 हजार वन संबंधी मुकदमे थे। जंगल अधिकार आन्दोलन के संगठनों द्वारा इन मामलों को रद्द कराने की मांग पर झारखण्ड के तत्कालीन वन एवं पर्यावरण मंत्री श्री सुधीर महतो के हस्तक्षेप से वन विभाग के अधिकारियों ने अपनी बैठक करके करीब 4 हजार मामलों को रद्द किया था। झारखण्ड में अभी भी 12 हजार लोगों पर वन सम्बंधी मुकदमे हैं। इन पर वन भूमि पर अतिक्रमण करने या जंगल से लकड़ी या दातुन-पत्ता तोड़ने का आरोप है। कुछ मामले वन्यजीवों का शिकार करने से संबंधित भी हैं। अभी छोटे-मोटे करीब 500 और मामलों को रद्द करने पर विचार चल रहा है, परन्तु इसमें खास प्रगति नहीं हुई। इनमें से रांची उपायुक्त के अनुसार करीब 101 मामलों को रद्द किया गया है। अभी वन संबंधी मामलों की सुनवाई या फैसला करने का अधिकार रेंजर और वन प्रमण्डल पदाधिकारी को है; इस नियम या प्रावधान को खत्म करने की जरूरत है क्योंकि इससे वन विभाग द्वारा वननिवासियों पर शोषण को और बढ़ावा मिलता है।

मालूम हो कि पूरे देश में जंगल अधिकार को लेकर लम्बी लड़ाई हुई है। झारखण्ड में खास कर संथालपरगना के राजमहल पहाड़ी क्षेत्र के पहाड़िया आदिवासियों और कोल्हान के हो आदिवासियों ने अंग्रेजों, जमींदारों और आज के वन विभाग और पुलिस के खिलाफ लम्बा संघर्ष किया। इस दौरान कई बार खूनी संघर्ष भी हुए। पश्चिम सिंहभूम के सारंडा जंगल में हो आदिवासियों ने 1978 से एक जोरदार जंगल आन्दोलन शुरू किया था। शुरू में तात्कालिक कारण यह था कि वन विभाग द्वारा सारंडा के साल पेड़ों को काटकर सागवान पेड़ लगाये जा रहे थे। वहां के आदिवासियों ने इसके विरोध में उन सागवान पेड़ों को काट दिया या उखाड़ कर फेंक दिया। प्रतिक्रिया में जंगल विभाग और पुलिस ने उन आदिवासियों पर दमन शुरू कर दिया। 1978 से 1985 के बीच 20 बार पुलिस फायरिंग हुए जिनमें कई लोग शहीद हुए, कई घायल हुए, दर्जनों लोग जेल गये और सैंकड़ों लोगों पर मुकदमे चले। सारंडा जंगल पश्चिम सिंहभूम, सिमडेगा और उड़ीसा तक फैला हुआ है जो हो और मुण्डा आदिवासियों का निवास क्षेत्र है। अब यह माओवाद-नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्र है। सरकार से एमओयू होने के बाद इस क्षेत्र में कई खदान कंपनियां भी आ रही हैं। इससे जंगल नष्ट होने के साथ ही जंगल क्षेत्र के आदिवासियों के जीवन पर विस्थापन और दमन का खतरा बढ़ गया है।

आज जब वनाधिकार कानून बन गया है तो सरकार इसे ईमानदारी और सही तरीके से लागू करे। जंगल के प्रबंधन का अधिकार गांवसभा को दे। जंगल में लोगों के रहने और जीने के अधिकार को सुनिश्चित करे। साथ ही जंगल से आदिवासियों के छीने गये अधिकारों को वापस करे तथा वनाधिकार कानून के मुताबिक आदिवासियों-वननिवासियों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने के उद्देश्य को पूरा करे। लेकिन वनाधिकार कानून को सरकार स्वतः लागू नहीं करेगी। वनाधिकार के लागू नहीं होने तथा जंगल से जुड़े बहुत सारे मामलों को लेकर वन क्षेत्र की जनता में आक्रोश है। इन्हें संगठित कर नये सिरे से जनसंघर्ष को दिशा देना होगा।

झारखण्ड का सच

- बाबूलाल जारिका

15 नवम्बर सन् 2000 को झारखण्ड का निर्माण हुआ। लोगों में आशा जगी थी कि सिद्धू-कान्हू, सिंदराय-बिंदराय, वीर बुधू भगत और वीर बिरसा मुण्डा की कुर्बानी से 1908 में जो सीएनटी एक्ट कानून आदिवासियों-मूलवासियों के जल, जमीन, जंगल की रक्षा करने के लिए बना था उसका धडल्ले से उल्लंघन करने का सिलसिला रुकेगा, लेकिन राज्य अलग हुए दस साल गुजर गये, पर हालात बद से बदतर होते जा रहे हैं। किसान-मजदूर बेहाल हैं। देशी-विदेशी पूंजीपतियों को सारे कानून तोड़ते हुए झारखंड के संसाधनों को लूटने की खुली छूट दे दी गयी है।

इस प्रकार बिरसा मुंडा और अन्य हजारों शहीदों ने अपना खून बहा कर झारखंडी जनता की जमीन की रक्षा करने के लिए जिस कानून को बनाने के लिए अंग्रेज सरकार को मजबूर किया था उसे यहाँ के शासक-प्रशासक, पूंजीपति, भूमि-दलाल आदि मिलकर खत्म करने में लगे हैं। मुख्यमंत्री बने अर्जुन मुंडा दुनिया भर की कंपनियों के साथ समझौता (एमओयू) किये हुए हैं, यानी उन कंपनियों को जमीन, खनिज और दूसरे सारे संसाधन कौड़ी की मोल हड़पने की छूट देने की पेशकश की। उन्हीं के लिए वे सीएनटी एक्ट खत्म करना चाहते हैं और यह सब वे विकास और रोजगार के नाम पर करते हैं जबकि इस प्रकार के तथाकथित विकास से पिछले 100 वर्षों में झारखंडी जन लाखों की संख्या में उजाड़े गये, पलायन के लिए मजबूर किये गये और बाहर से आकर लोग यहाँ बसते गये। विकास तो सिर्फ पूंजीपतियों और बाहरी लोगों का हुआ है झारखंडियों का तो केवल विनाश ही हुआ है। इस प्रकार हम देखते हैं कि झारखंडी जनों की लाखों एकड़ जमीन अवैध रूप से हड़पी गयी। उनमें से थोड़े-से लोगों ने इसके खिलाफ मुकदमे किये। फिलहाल 3385 मामले एक कोर्ट से दूसरे कोर्ट कई सालों से चक्कर काट रहे हैं। इन मामलों की सूची इस प्रकार है:- राँची 2500; पं. सिंहभूम 91; पूर्वी सिंहभूम 7; खूंटी 10; लोहरदगा 20; गुमला 57; सिमडेगा 39; सरायकेला 37; रामगढ़ 61; हजारीबाग 93; धनबाद 68; गढ़वा 12; चतरा 11; पलामू 19; लातेहार 24; बोकारो 48; गिरिडीह 31; साहेबगंज 32; पाकुड 17; गोड्डा 26; दुमका 31; जामताड़ा 25; देवघर 37; कोडरमा 17।

इन मामलों पर आदिवासी मुख्यमंत्री वाली सरकार बेखबर है। बड़ी मुश्किल से 3041.47 एकड़ भूमि को लेकर वाद दायर किया गया है। दस साल में महज 87 मामलों का निष्पादन किया गया और आदिवासी अपने बल-बूते लगभग 10. 48 एकड़ जमीन पर दखल ले पाए। जिम्मेवार पदाधिकारी कहते हैं कि आदिवासियों की जमीन से कब्जा हटाने की कार्रवाई चल रही है लेकिन झारखंड बनने के बाद से आदिवासियों की जमीन पर कब्जा बढ़ता ही जा रहा है। देखते ही देखते 50 हजार एकड़ से भी अधिक भूमि आदिवासियों के हाथ से निकल चुकी है और छोटे-छोटे शहरों में भी जमीन हड़प की कोई गिनती ही नहीं है। मनमाने ढंग से पदाधिकारी और भूमि दलाल के सांठ-गांठ से अवैध कारोबार जारी है। फिलहाल चक्रधरपुर अंचल के भूमि माफिया पवन शर्मा ने भलियाकुदर के डोमन हो (बोदरा) की जमीन की हेरा-फेरी करके एक प्लॉट को दो-दो बार बेचवाकर दर्जनों लोगों को ठग लिया। उसके भाजपा कार्यकर्ता होने के कारण मुंडा सरकार की उस पर कोई कार्रवाई नहीं हो रही है और महेन्द्र बोदरा रिक्शा चलाकर कितनी दूर तक कोर्ट में जाकर न्याय ले सकेंगे!

बिरसा मुण्डा और शहीद अपमानित हैं। सरकार में बैठे केन्द्र के नेता हों या राज्य के नेता, प्रधान मंत्री हो या मुख्यमंत्री, और मंत्री हो या संतरी - कांग्रेस और भाजपा के सभी सांसद-विधायक शहीदों के शहीद दिवस मनाने के वक्त लम्बे-लम्बे भाषण देते हैं; आदिवासियों के विकास के नाम पर घड़ियाली आंसू बहाना एवं बड़े-बड़े वादे करना, मोटी-मोटी फूलमालाएं चढ़ाना सिर्फ एक ढोंग बनकर रह गया है; शहीदों को अपमानित करने के सिवाय यह दूसरा कुछ नहीं है क्योंकि

जिन शहीद आंदोलनकारियों ने जमीन और जंगल पर आदिवासियों के हक की रक्षा करने के लिए कुरबानियां दी उनकी उपलब्धियों की धज्जियां उड़ाई जा रही है। लीजिए इसका एक जीता-जागता उदाहरण। 4 दिसंबर 2010 को जब भू-राजस्व मंत्री मथुरा महतो के आदेश से राजस्व सचिव ने सीएनटी एक्ट को सख्ती से लागू करने का आदेश जारी किया तो जिलों में अवैध भूमि हस्तांतरण और रजिस्ट्री रुक गई। इससे सारे पूंजीपति, बिल्डर एवं भूमि माफियाओं में हड़कंप मच गया; होहल्ला शुरू कर दिया और सरकार पर दबाव डालने लगे कि सीएनटी एक्ट धारा 46(1)(ख) को लागू नहीं करना जारी रखा जाए। मुख्यमंत्री अर्जुन मुंडा ने अपने इन भाई-बंधुओं की बात मानते हुए तुरंत करवाई की और सीएनटी एक्ट कानून को उल्लंघन करते हुए अवैध तरीके से जमीन की खरीद-फरोख्त को जारी रखने का आदेश दे दिया। जाहिर है कि यही भाजपा की नीति भी है। आखिर इसीलिए तो भाजपा सांसद यशवंत सिन्हा ने लगे-लगे खुले आम घोषणा कर दी कि सीएनटी एक्ट को खतम कर देना चाहिए।

आदिवासियों-मूलवासियों को जल, जमीन, जंगल पर अधिकारों से वंचित करने की नीति के साथ ही ब्रिटिश सरकार ने यहां अपना राज शुरू किया था। जब अंग्रेजों ने हिंदुस्तान पर कब्जा किया और ईस्ट इंडिया कम्पनी 1765 ई. में छोटानागपुर और संथाल परगना में विस्तार करके पैर फैलाने लगी तब आदिवासियों ने इसका विरोध किया और 1766 में ही संगठित होने लगे। तिलका माझी से शुरू करके और सिद्ध-कान्हू-चांद-भैरों, बुद्धू भगत, जतरी उराँव, सिंदराय-विंदराय आदि ने एक के बाद एक विद्रोह करते हुए अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाई जारी रखी। सेरंगसंभा घाटी में मोर्चा लिया और शहीद भी हो गए। हक की लड़ाई चलती रही। 15 नवम्बर 1875 को जन्मे बिरसा मुंडा ने अपना होश संभालते ही ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध लड़ाई छेड़ी और 2 फरवरी 1900 को टेबो के शंकरा में गिरफ्तार हुए और उन्हें जेल में विष देकर मार दिया गया।

बिरसा मुंडा और हजारों शहीदों के खून के बल पर ही 1908 में सीएनटी एक्ट बना लेकिन इस सीएनटी एक्ट का उल्लंघन करते हुए विकास के नाम पर जंगल से उजाड़कर और खदान के लिए विस्थापित करके आदिवासियों और मूलवासियों को बेघर कर दिया गया। लेकिन आंदोलन जारी रहा। नोवामुंडी, गुवा, जामदा, किरिबुरु, चिडिया, पदापहाड़ इत्यादि मांइस खोलकर पूरे एशिया प्रसिद्ध सारंडा जंगल को उजाड़ा गया। आंदोलन के बल पर सरकार ने लाचार होकर 1982 में जंगल कानून बनाया पर आदिवासियों को कोई फायदा नहीं मिला। फिर 2006 में वन अधिकार कानून बना जिसमें जंगल में रहनेवाले आदिवासियों को खुंटकट्टीदार अधिकार देने और हर परिवार को पाँच एकड़ के हिसाब से जमीन मापी कर पहचान पट्टा दे देने का प्रावधान किया गया लेकिन उसके 5 साल के बाद भी अर्जुन मुंडा सरकार उन अधिकारों को दिलाने में असफल रही। आदिवासी शुद्ध जल, बिजली, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित हैं। अभी फिलहाल तक टेबो में काफी जन आंदोलन के बाद 1992 में आवासीय कन्या विद्यालय खोला गया लेकिन अफसोस इस बात की है कि अभी तक इस विद्यालय में मैट्रिक तक अपग्रेड नहीं किया गया। इससे जाहिर होता है कि झारखण्ड सरकार के दिखाने के दांत और खाने के दांत अलग-अलग हैं।

आंदोलन के शहीदों को सम्मान के लिए आमरण अनशन

दिनांक 22 मार्च 2011 को भाकपा (माले) के केन्द्रीय कमिटी सदस्य सह पूर्व विधायक बहादुर उराँव राँची के बिरसा चौक पर जनता की विभिन्न माँगों के समर्थन में आमरण अनशन पर बैठे। आमरण अनशन की मुख्य माँगें थीं:

1. झारखण्ड आंदोलन के दौरान शहीद हुए लोगों के परिजनों को नौकरी, मुआवजा और सम्मान देना होगा।
2. सीएनटी एक्ट तथा एसपीटी एक्ट को सख्ती से लागू करना होगा।
3. विधायक व सांसद निधि को समाप्त कर इस फंड को पंचायतों व ग्रामीण विकास मद में दिया जाए ताकि ग्राम सभा द्वारा जनहित कार्य कराये जा सकें।
4. जनजातीय-क्षेत्रीय भाषा के लिए अलग बजट तैयार कर प्राथमिक से उच्च स्तर तक पठन-पाठन को अनिवार्य बनाया जाए तथा शिक्षकों की बहाली अविलंब की जाए।
5. 18 वर्ष से ऊपर सभी ग्रामीणों को जॉब कार्ड उपलब्ध कराया जाए तथा कृषक मजदूरों को उचित अधिकार व उन्नत कृषि का प्रशिक्षण दिया जाए।
6. ग्राम व वनग्राम में बसे आदिवासियों को 50 हजार रुपये अनुदान दिया जाए जिससे वे मुर्गी, बकरी, सुअर इत्यादि पालन करके जीवकोपार्जन कर सकें और हंडिया-दारू जैसे नशीले पदार्थों के व्यापार को रोका जा सके।
7. सम्पूर्ण झारखंड क्षेत्र में वन विभाग की जमीन पर तलहटी में 200 फीट चौडा एवं 30 फीट गहरा जल भंडार बनाये जायें ताकि वर्षा का पानी हमेशा जमा रहे और कृषक 12 महीने खेती कर सकें। इस प्रोजेक्ट से सुखाड व अनावृष्टि का भी मुकाबला किया जा सकता है।
8. कृषकों को कृषि खर्च का 50 प्रतिशत अनुदान दिया जाए जिससे कृषि को प्रोत्साहन मिले तथा किसान कृषि कार्य को बढ़ा सकें।
9. पारा शिक्षकों को स्थायी किया जाए।
10. सभी गाँवों में स्वास्थ्य सेवाएं, पेयजल, बिजली उपलब्ध करायी जाए।
11. सरकारी विद्यालयों में शिक्षा की व्यवस्था सुधारी जाए।
12. वनग्राम में बसे सभी ग्रामवासियों को शीघ्र परचा दिया जाए क्योंकि 2006 से वन अधिकार अधिनियम लागू हुआ, पर परचा देने का काम अब तक लंबित हैं।
13. कोई मंत्री-मुख्यमंत्री यदि चुनाव लड़ते हैं तो पहले उन्हें अपने पद से इस्तीफा देने का कानून बनाया जाए क्योंकि वे सरकारी सुविधा व राशि का उपयोग करते हैं।
14. तमाम शिक्षित बेरोजगारों को नौकरी दी जाए।
15. वर्ष 1990 से लंबित चक्रधरपुर, चाईबासा मुख्य मार्ग के रेलवे ओवरब्रिज को यथाशीघ्र पूरा किया जाए।
16. संजय नदी पर वर्षों से लंबित लिफ्ट इरिगेशन को पूर्ण करके बैका, लोहरदगा, आरगुण्डी आदि गांवों के हजारों ग्रामीणों को सिंचाई सुविधा उपलब्ध करायी जाए।
17. त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव से चयनित ग्राम पंचायत सदस्य, मुखिया, पंचायत समिति सदस्य व जिला परिषद् सदस्यों को उचित मानदेय दिया जाए एवं 3 करोड़ विधायक निधि फंड को पंचायत को निर्गत किया जाये ताकि ग्रामसभा के द्वारा विकास का कार्य अधिक से अधिक मात्रा में हो सके।
18. खूंटपानी प्रखंड का मुख्यालय चक्रधरपुर-चाईबासा मुख्य मार्ग पर बनाया जाए ताकि पूर्ण रूप से जनहित कार्य हो सके। खूंटपानी प्रखंड का मुख्यालय पंडराशाली में रखने से जनता को भारी परेशानी का कारण बन गया है। तत्काल खूंटपानी में प्रति सप्ताह तीन दिन कैम्प कार्यालय चलाया जाए।

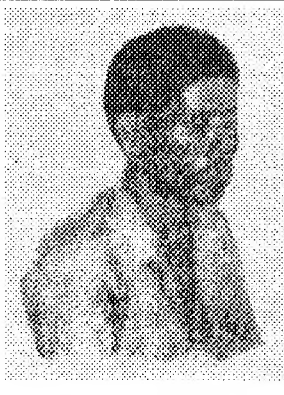
19. मनोहरपुर व जगन्नाथपुर, गोइलकेरा सहित नक्सल प्रभावित क्षेत्र के गांवों को आदर्श ग्राम बनाया जाए।
20. कराईकेला को अलग प्रखण्ड बनाया जाए।
21. मुख्यमंत्री द्वारा खरसावाँ विधानसभा चुनाव के दरमियान किए वादानुसार ग्रामीणों की सहमति बगैर गाँव में उद्योग स्थापित करने हेतु किए गए एकरारनामा (MOU) तत्काल रद्द किया जाए।
22. वर्ष 2003 में मुद्रित एवं वितरित हो, मुण्डा, संथाल तथा कुड़ुख भाषा पाठ्य पुस्तकों को सात वर्षों के अंतराल में भी विद्यालयों में पढाया नहीं जाना अर्जुन मुण्डा की विफलता है। वादानुसार तात्कालिक प्रभाव से उन भाषाओं की पढ़ाई प्रारम्भ की जाये।

कॉमरेड बहादुर उराँव के आमरण अनशन के तीसरे दिन (24.03.11) माले विधायक विनोद सिंह ने आमरण अनशन के कारणों को विधान सभा में उठाया। उसके बाद विधान सभा अध्यक्ष श्री सीपी सिंह ने इस प्रश्न पर त्वरित कार्रवाई करते हुए सरकार को इन माँगों के प्रति संजीदगी दिखाने और समस्याओं का हल करने का निर्देश दिया। उसी आलोक में उस दिन शाम करीब 7.30 बजे सरकार के उत्पाद मंत्री श्री राजा पीटर अनशन स्थल पर पहुँचे और फल का जूस पिलाकर कॉमरेड बहादुर उराँव का अनशन तुड़वाया और उनकी माँगों पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने का आश्वासन दिया। खासतौर से झारखंड आंदोलन के दौरान शहीद हुए लोगों के परिजनों को नौकरी, मुआवजा व सम्मान के सवाल को शीघ्र निपटाने का आश्वासन दिया। इस अवसर पर कई महत्वपूर्ण लोग उपस्थित थे जैसे माले के विधायक विनोद सिंह, मासस विधायक अरूप चटर्जी, माले के केन्द्रीय कमिटी सदस्य शुभेन्दु सेन, वरिष्ठ पत्रकार राम कुमार, भुवनेश्वर केवट, मेघा सेन आदि उपस्थित थे।

24.03.2011 को भूख हड़ताल तोड़ने के बाद 25.03.2011 को विधानसभा के अध्यक्ष सी.पी.सिंह के साथ सभी माँगों पर विचार-विमर्श की गयी। बातचीत के अंत में उन्होंने मांगों को पूरा करने के लिए आश्वासन दिये। 50% पारा शिक्षकों को जेपीसी कमीशन के माध्यम से लेने का आश्वासन दिया। विधायक निधि को समाप्त करके पंचायतों को देने के लिए वे मंजूर नहीं हुए। वार्ता में शामिल हुए सुदेश महतो ने शहीदों के प्रति अपनी श्रद्धा जतायी और गंभीरता से उनसे संबंधित मांग पर विचार करने का आश्वासन दिया। विधायक विनोद सिंह ने 24 मार्च को विधानसभा के सत्र में अनशन के मुद्दों पर सवाल किये और 25.03.2011 को भी विधानसभा अध्यक्ष पर दबाव डाला। राजा पीटर गोपाल अनशन तोड़ते समय कहे कि विधानसभा में सवाल उठाने पर सभी माँगों पर संज्ञान ले लिया गया है। उन्होंने टीवी मीडिया के साथ इन्टरव्यू में बात करते हुए सभी माँगों को विचार-विमर्श करके पूरा करने का आश्वासन व्यक्त किया।



शहीद लाल सिंह मुण्डा
(जिन्होंने जल, जंगल, जमीन की लड़ाई में अपनी जिन्दगी कुर्बान कर दी)



शहीद सूला पुर्ती
(गुवा में प्रतिवाद सभा के नेता)



बहादुर उराँव के साथ लालू सोरेन
जिन्होंने गुवा गोलीकांड के समय आंदोलनकारियों को पुलिस से बचाकर सुरक्षित स्थान तक पहुंचाया

यहां नीचे बहादुर उरांव के सरकार के साथ कुछ पत्राचार दिये गये हैं जो सूचित करते हैं कि सरकार किस प्रकार सारी बातों को जानकर चुप्पी मारकर बैठी रहती है।

बहादुर उराँव
पूर्व सदस्य
बिहार विधानसभा

स्थान : चक्रधरपुर
दिनांक : 20-09-2002

सेवा में,

माननीय मुख्यमंत्री श्री बाबूलाल मरांडी
झारखण्ड सरकार, राँची।

विषय : झारखण्ड प्रान्त के पश्चिम सिंहभूम जिला अन्तर्गत 8 सितंबर 1980 के गुवा गोलीकांड के शहीदों के परिजनों को नौकरी देने के संबंध में।

महाशय,

उपरोक्त विषयांक के संदर्भ में कहना है कि 8 सितंबर 1980 को गुवा थाना अंतर्गत हाट-मैदान में निम्नलिखित मांगों को लेकर एक आम सभा हुई थी।

1. झारखण्ड आंदोलन के दौरान गिरफ्तार हुये आंदोलनकारियों को रिहाई की जाए।
2. आंदोलनकारियों पर से पुलिस जुल्म बन्द की जाए।
3. स्थानीय लोगों को नौकरी दी जाए।
4. झारखण्ड अलग प्रान्त की मांग।

इन मांगों को जिले के तत्काल भूमि-सूधार उपसमाहर्ता एवं आम सभा के दौरान दण्डाधिकारी के तौर पर नियुक्त फ्रांसिस डीन को एक ज्ञापन सौंपा गया। झारखण्डियों द्वारा दिये गये मांग पत्र पर कोई यथोचित आश्वासन की सहमति न देकर उत्साही आन्दोलनकारियों पर हिटलरी फरमान जारी करते हुए गोली चलाने का आदेश दिया। जिनपर सिपाहियों ने बर्बरता पूर्वक झारखण्डियों को गोलियों से छलनी करना शुरू कर दिया, इस जघन्य गोलीकांड में दस लोग शहीद हो गये।

आज जब इन आंदोलनकारियों जैसे असंख्य झारखण्डियों के एक-एक बुंद लहु से बना झारखण्ड अलग प्राप्त की बागडोर आपके हाथों पर हैं, और आप सत्ता पर काबिज है। तो मैं कहना चाहुंगा कि इन विकट परिस्थितियों में शहीदों के परिजनों को रोजी-रोटी की तालाश में बेघर तक होना पड़ा है। जिसकी जानकारी आज झारखण्ड प्रान्त का इतिहास है कि सुधि तक आपने नहीं ली।

शहीदों के नाम	पता	प्रखण्ड	शहीदों के नाम	पता	प्रखण्ड
1. ईश्वर सरदार	कैरोम	गोईलकेरा	6. जीनु सुरीन	जोजोगुटु (उषा)	नोवामुण्डी
2. रामो लागुरी	चुर्डी		7. चैतन्य चाम्पिया	बाईहातु	
3. रान्दो लागुरी	चुर्गी		8. चुड़ी हांसदा	हातना बुरू	
4. रेगों सुरीन	कुन्बिया		9. जुरा पुर्ती	बन्डु	
5. बागी देवगम	जोजोगुटु (उषा)	नोवामुण्डी	10. गोन्डो होनहागा	कोलायबुरू	

अतः आपसे विनंम्र निवेदन है कि इस गोली कांड की अविलंब जाँच-पड़ताल कर शहीदों के परिजनों को नौकरी देने की व्यवस्था की जाए।

भवदीय
ह./-
(बहादुर उराँव)
पूर्व विधायक, चक्रधरपुर, झारखण्ड।

बाबू लाल मरांडी
मुख्यमंत्री, झारखण्ड

अर्द्ध सरकारी पत्र संख्या - 5300956/राँची, दिनांक - 08/10/2002

प्रिय श्री उराँव जी,

आपका पत्र दिनांक : 29-09-2002 जो झारखण्ड प्रान्त के पश्चिम सिंहभूम जिला अंतर्गत 8 सितम्बर, 1980 के गुवा गोलीकाण्ड के शहीदों के परिजनों को नौकरी देने से संबंधित है, प्राप्त हुआ।

मैं इस मामले को दिखवा रहा हूँ।

सादर,

आपका

ह./-

(बाबू लाल मरांडी)

श्री बहादुर उराँव, पूर्व सदस्य
बिहार विधानसभा, चक्रधरपुर।

बहादुर उराँव
पूर्व सदस्य
बिहार विधानसभा

स्थान : पटना
दिनांक : 28-06-2005

सेवा में,

माननीय अध्यक्ष महोदय
झारखण्ड विधानसभा, राँची।

विषय : अनावश्यक खर्च पर रोक लगाने के संबंध में

महाशय,

निवेदन पूर्वक निम्नलिखित बिन्दुओं पर आपका ध्यान आकृष्ट कराना चाहता हूँ।

1. विद्युत का उत्पादन बढ़ाये बिना बिजली उपभोक्ताओं की बढ़ोत्तरी करना सबसे बड़ी समस्या बनी हुई है। पावर प्लांट बैठाने के बाद ही बिजली उपभोक्ता बढ़ाया जाये।
2. विधायक एवं पूर्व विधायक को राजधानी में दस डीसमील जमीन दिया जाना अनुचित है। इस पर रोक लगाकर गरीबों के हित में खर्च किया जाये।
3. विधायक व मंत्री को साल-दो साल में बदलकर नये वाहन आपूर्ति करने की परंपरा को बंद किया जाये।
4. विधायक एवं पूर्व विधायक को वायु सेवा यात्राभत्ता बंद करके इस राशि का उपयोग विकलांगों के हित में किया जाये।
5. विधायक एवं पूर्व विधायक के साथ रेलवे यात्रा में केवल एक सहयात्री को यात्रा करने का अनुमति दिया जाय। तीन-चार सहयात्री पर अविलंब रोक लगाया जाये।
6. पूर्व विधायक व पूर्व मंत्रियों के साथ कैबिनेट की मासिक बैठक आयोजित किया जाये। ताकि पूर्व विधायक भी क्षेत्र की समस्याओं को उठा सके।

7. उग्रवादियों के नाम पर ग्रामीण व निर्दोष लोगों पर कारवाई करना बंद किया जाये। कार्रवाई करने के पहले निष्पक्ष जाँच की आवश्यकता है।
8. चापाकल व तालाब निर्माण के नाम पर जनप्रतिनिधि पदधिकारियों के साथ मिलकर जमकर लूट रहे हैं। जनता पेयजल के लिए तरस रही है। जो जाँच का विषय है।
9. झारखण्ड अलग राज्य के आंदोलन में कुर्बानी देने वाले शहीदों के आश्रितों को नौकरी एवं शहीदों के माता-पिता को पेंशन दिया जाये।
10. जनता की सेवा करने वाले जनप्रतिनिधियों एवं मंत्रियों की सुरक्षा व्यवस्था में कटौती किया जाये।
11. विधायक निधि के नाम पर विधायक व मंत्री केवल कमीशन राशि वसूली कर रहे हैं। विधायक निधि को लेकर गांव में सदैव अशांति बना रहता है। इसलिए विधायक निधि को बन्द कर दिया जाये।
12. बी.एड. प्रवेश हेतु चयन में स्थानीय उम्मीदवार एवं स्थापना अनुमति प्राप्त विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों को अनुभव के आधार पर प्राथमिकता दिया जाये।
13. झारखण्ड अधिविद्य परिषद्, राँची के विज्ञप्ति संख्या 34/2005 में पांच क्षेत्रीय भाषा की पढ़ाई शुरू करने का आदेश दिया गया है, लेकिन क्षेत्रीय भाषा की पुस्तकें उपलब्ध नहीं कराया गया है। क्षेत्रीय भाषा की शिक्षकों की बहाली किया जाये। अविलम्ब व्यवस्था की जाये।

उपरोक्त बिंदुओं पर जाँच-पड़ताल करके कारवाई शुरू करने की कृपा करेंगे।

भवदीय
ह./-
(बहादुर उराँव)
पूर्व विधायक, चक्रधरपुर, झारखण्ड।

इन्दर सिंह नामधारी
अध्यक्ष, झारखण्ड विधानसभा

राँची
दूरभाष : 2440400, 2440075 (का.)
2281884 (आ.)
225909 (आ. डालटनगंज)
फैक्स : 0651-2441712 (का.)

अर्द्ध सरकारी पत्र संख्या - 1481/राँची, दिनांक - 21/07/2005

प्रिय बहादुर उराँव जी,

आपका पत्र मिला । आपने बहुत सुंदर सुझाव अपने पत्र में दिये हैं। जिन सुझावों पर मेरे स्तर से कार्रवाई होनी है, उन पर मैं अवश्य कार्रवाई करूंगा। बाकी के काम तो सरकार को करना है। आप माननीय मुख्यमंत्री जी से भी पत्राचार करें।

श्री बहादुर उराँव,
पूर्व विधायक, चक्रधरपुर,
पश्चिमी सिंहभूम

आपका
ह./-
(इन्दर सिंह नामधारी)

बहादुर उराँव
पूर्व सदस्य
बिहार विधानसभा

स्थान : चक्रधरपुर
दिनांक : 24-06-2002

सेवा में,

महामहिम राज्यपाल महोदय,
झारखण्ड सरकार, राँची।

विषय : डी.जी.पी. द्वारा किरीबुरू डी.एस.पी. श्री बिरसा टोप्पो को मनोहरपुर थाना अंतर्गत बिटकिलसोय पुलिस संहार जो उग्रवादियों द्वारा किया गया में "बली का बकरा" बनायें जाने के संबंध में।

महाशय,

उपरोक्त संबंध में कहना है कि पूरे भारत का गौरव कहे जाने वाला एशिया प्रसिद्ध सारंडा जंगल सात सौ पहाड़ियों को अपने आंचल में समेटे जहाँ प्राकृतिक छठा विखरने वाली झारखण्ड की धरती पर संकट के बादल मंडराने लगे है, वहाँ उग्रवादी संगठन एम.सी.सी द्वारा मात्र कुछ दिनों में अपना शरणस्थली बना लिया गया है, ऐसी बात नहीं है। सारंडा जंगल जो पं. सिंहभूम जिले में पड़ता है कोल्हान बहुल क्षेत्र हैं जहाँ पर अंग्रेजों ने भी घुटने टेक दिए थे। वहीं पर आज उग्रवादियों द्वारा अपना परचम लहराया जा रहा है। इस क्षेत्र को उग्रवादियों से मुक्त कराना इतना आसान नहीं जितना डी.जी.पी. सोच रहे हैं, तथा अपनी सरकार की कमजोरियों को छुपाने के लिए प्रथम दृष्टया आरोपीयों के रूप में किरीबुरू के डी.एस.पी. श्री बिरसा टोप्पो को निलंबित तथा पं. सिंहभूम एस.पी. को तबादला किया जा रहा है। महामहिम, यदि किसी को स्थानांतरण अथवा निलंबित किये जाने से ही यदि उग्रवाद पर काबू पाया जा सकता है तो ये मरांडी सरकार की भूल है। ये बात बिल्कूल निराधार है कि किरीबुरू डीएसपी श्री बिरसा टोप्पो के गलत नेतृत्व के चलते इतनी बड़ी घटना घटी। कई पुलिस मुटभेड़ तथा नरसंहारों से साफ पता चलता है कि एम.सी.सी का खुफिया तंत्र सरकारी खुफिया तंत्र से कहीं अधिक ज्यादा मजबूत है। गाँवों से लेकर शहरों तक की गतिविधियों की जानकारी घंटो-घंटो के मिलती रहती है। यही कारण है कि पं. सिंहभूम में आज प्रदेश का इतना बड़ा पुलिस नरसंहार हुआ। पुलिस बिटकिल सोय गाँव में महाभारत के चक्रव्यू में अभिमन्यू के समान फँस चुकी थी। किसी भी रास्ते से निकलना मुश्किल था। क्योंकि पुलिस चारों ओर से उग्रवादियों द्वारा घेर लिया गया था। भले ही सरकार अपनी कमजोरी छिपाने के लिए बिरसा टोप्पो को बलि का बकरा बना दे।

महामहिम महोदय सबसे दुःख की बात तो यह है कि सरकार का मुखिया, कोल्हान के मानकी मुन्डाओं को पुलिस मुखबिर के रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं। ये बात स्वयं मुख्यमंत्री बाबूलाल मराण्डी ने विटकिल सोय मुन्डा जीवन मसीहा भुईयां के बारे में कही कि पुलिस मुखबिरी के कारण घटना घटि। जब विकास के कार्यों में कमिशन खोरी के मामले के समय प्रखण्ड स्तर के अधिकारी मनमानें ढंग से अपने चेहते बिचौलियों को बिना ग्राम सभा किए ही ठेका दे देते थे उस समय मराण्डी सरकार मानकी मुन्डाओं के अधिकार की बात भूल जाते हैं। जब सरकार संकट में है तो मानकी मुन्डाओं को याद किया जा रहा है। उनकी तमाम अधिकारों को याद दिलाया जा रहा है। उन्हें कोल्हान का असली सरकार कहा जा रहा है, उनकी जिम्मेवारियों को याद दिलायी जा रही है। उनकी तमाम सुख-सुविधा जैसे फोन, आवागमन भत्ता वर्षों पुरानी लंबित मानदेय की व्यवस्था करने की बात सरकार के अगला अधिकारी कर रहे हैं। विकास योजनाओं में भागीदारी सीएनटी एक्ट तथा विलकिंसन रूल को और प्रभावी बनाये जाने के बाद की जा रही है। यदि मानकी-मुण्डा पुलिस का साथ दे रहे हैं तो उनकी जान जा रही है और यदि पुलिस का साथ नहीं दे रहे हैं तो सरकार आज उनकी अधिकार की बात कर रही है।

आज से चौदह माह पहले सिंहभूम की धरती पर उग्रवादियों की गतिविधियों की जानकारी पुलिस को मीडिया के

माध्यम से मिल चुकी थी। बंदगाँव प्रखण्ड हाट बाजार में इसके पर्चे बाँटे गऐं, कुचाई प्रखण्ड में भी पर्चे बाँटे गऐ। तथा पुलिस एम सी सी का एरिया कमाण्डर हीरा सिंह मुण्डा पकड़ाया गया, पुलिस पहले तो अत्याधुनिक हथियार न होने की रोना रोयी। परन्तु जब उसे अतिआधुनिक हथियार लगभग डेढ़ करोढ़ का विभाग को दिया गया जिसमें एसएलआर, पिस्टल, हैंड ग्रेनेड, मोर्टार, वायरलेस सेट, जीवित कारतूस आदि हथियारों के अलावा छ सौ से ज्यादा वाहन, बुलेटप्रूफ जैकेट और वैसे संसाधनों की खरीद की गयी जो पुलिस को आवश्यकता थी। परन्तु पुलिस विभाग आज इतना कमजोर बेवस हो चूका है कि डेढ़ करोड़ में एक के हथियार लुटा चुका है। पुलिस विभाग अपने हथियारों को सुरक्षित नहीं रख पा रही है तो वे क्या जनता को सुरक्षा कर पायेंगे? सरकार की विफलता तो ये है कि साधन तो मुहैया करा दिए परन्तु चलाने की ट्रेनिंग पुलिस के जवानों को नहीं मिली। आज पुलिस इतनी लाचार है कि जहाँ भी उग्रवादियों से मुठभेड़ हो रही है पुलिस को घुटने टेकने पड़ रहे हैं। चाहे वो लातेहार हो, पलामू हो, गढ़वा हो या पं. सिंहभूम। उग्रवादी जो चाहे सो कर रहे हैं। हथियार लूट रहे हैं, पुलिस को पीट रहे हैं। उपरोक्त रूप से देखा जाए तो सरकारी पैसे जो पुलिस विभाग को दिये जा रहे हैं वो उग्रवादी संगठनों को ही मिल रहे हैं।

महामहिम महोदय राजग सरकार आज हर मामले में विफल हो चुकी है। सरकार की जो भी नीति वन रही है उस नीति से यहाँ जातिय हिंसा ही भड़क रही है। आज लोकतंत्र पूर्णतः विफल हो चूका है। दो वर्ष बीत चूके हैं यहाँ के बेरोजगार युवकों को आज तक इतने रिक्त पर्दे होने के उपरांत भी आजतक एक भी विभाग में नियुक्ति नहीं हो रही है। विवश होकर शिक्षित युवक युवतियाँ हथियार उठाने के विवश हो रहे हैं अप्रत्यक्ष रूप से और एमसीसी का साथ दे रहे हैं।

सरकार की इन्हीं घिसे-पिटे नितियों के कारण स्थानीय लोगों का मनोबल गिर रहा है। एमसीसी इन्हीं कमजोर नसों की लाभ उठा रहा है। ग्रामीण के सामने कुछ दिख रहा है। जंगल के अंदर गाँवों में विकास का किरण का न पहूँचना, व्याप्त भ्रष्टाचार, पुलिसिया जुल्म वन विभाग द्वारा ग्रामीणों को बेवजह विभिन्न मुकदमों में फंसाना आदि ग्रामीणों को सरकार के खिलाफ खड़ा कर दिया है। और ऐसे समय में एमसीसी का सहारा मिलना, सरकार के लिए ही नहीं, पूरे समाज में खतरा पैदा हो गया है।

एक बार यदि सारंडा के जंगलों में उग्रवादियों के पैर जम गये तो कश्मिर घाटी बनने में ज्यादा दिन नहीं लगेगें। समय रहते यदि मरांडी सरकार इस समस्या का समाधान नहीं खोजती है और पुलिस बल से उग्रवादीयों को समाप्त करने की बात सोचती है तो कभी भी भटके युवक युवतियों को सही रास्ते पर नहीं लाया जा सकता है।

महामहीम महोदय उपरोक्त सभी समस्या का समाधान हो अन्यथा पूरे 22 जिले में उग्रवाद फैलने में देर नहीं लगेगी।

अतः महामहीम राज्यपाल से अनुरोध है कि उपरोक्त समस्या का समाधान झारखण्ड सरकार से कराया जाये अथवा झारखण्ड सरकार को भंग किया जाये।

धन्यवाद!

भवदीय

ह./-

(बहादुर उराँव)

पूर्व विधायक, चक्रधरपुर, झारखण्ड।

निदेशक

Director

राष्ट्रपति सचिवालय
राष्ट्रपति भवन
नई दिल्ली-110004

President's Secretariat
Rashtrapati Bhawan
New Delhi - 110004

संख्या - 1400256/पी-2/02 दिनांक - 19 जुलाई, 2002

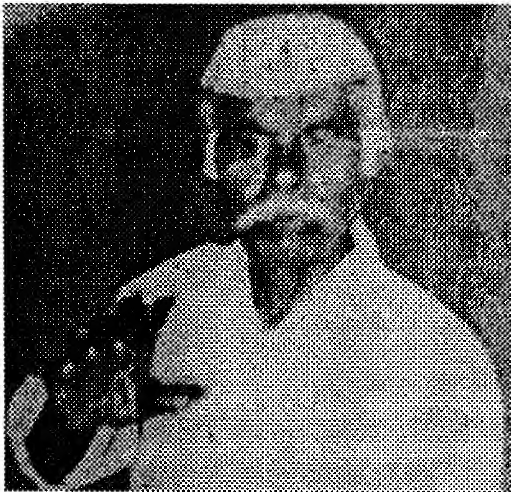
प्रिय बहादुर उराँव,
पूर्व सदस्य,
बिहार विधानसभा,
ग्राम आसनतालिया, पो०- चक्रधरपुर, जिला- प. सिंहभूम,
झारखण्ड।

महोदय,

आपका दिनांक 24 जून, 2002 का पत्र संलग्नक सहित प्राप्त हुआ जोकि मुख्य सचिव, झारखण्ड सरकार को समूचित ध्यानार्थ हेतु अग्रेषित कर दिया गया है। कृपया आप अपने पत्र के संदर्भ में उक्त कार्यालय से सम्पर्क करें।

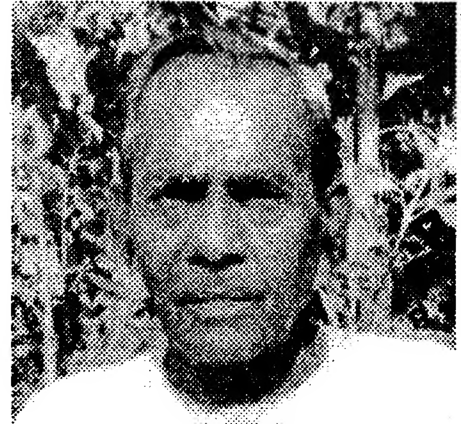
सादर,

विनीत,
ह./-
(शिव कुमार अग्रवाल)



स्व. द्वारिका प्रसाद मिश्रा

(स्व. मिश्रा कांग्रेस सेवा दल के नेता थे। वे पाँच दशकों तक आर्थिक रूप से कमजोर लोगों के लिए काम करते रहे। उन्होंने हमेशा झारखंड आंदोलनकारियों की मदद की। 23 अगस्त 2011 को उनका निधन हो गया।)

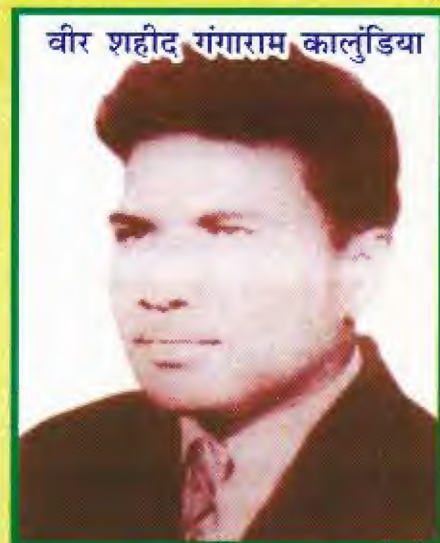


स्व. मधुसूदन महतो

(आप आसनतलिया पंचायत के मुखिया रहे और झारखंड आंदोलन में हमेशा साथ देते रहे।)



सेरेंगदा के शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए
बहादुर उराँव



वीर शहीद गंगाराम कालुंडिया



गुवा बाजार जहां 8 सितंबर 1980 सभा हुई और पहले गोलीकांड हुआ।



वीर शहीद निर्मल महतो

बहादुर उराँव, पूर्व विधायक, द्वारा झारखंड शहीद स्मृति मंच की ओर से प्रकाशित।
पताः ग्राम - राखा, आसनतलिया पंचायत, चक्रधरपुर, जिला - पश्चिम सिंहभूम।

Printed at : Anita Printers, Jsr # 2442750